www.sukhiparivar.com

₹25

समृद्ध सुखी परिवार

सितंबर 2011

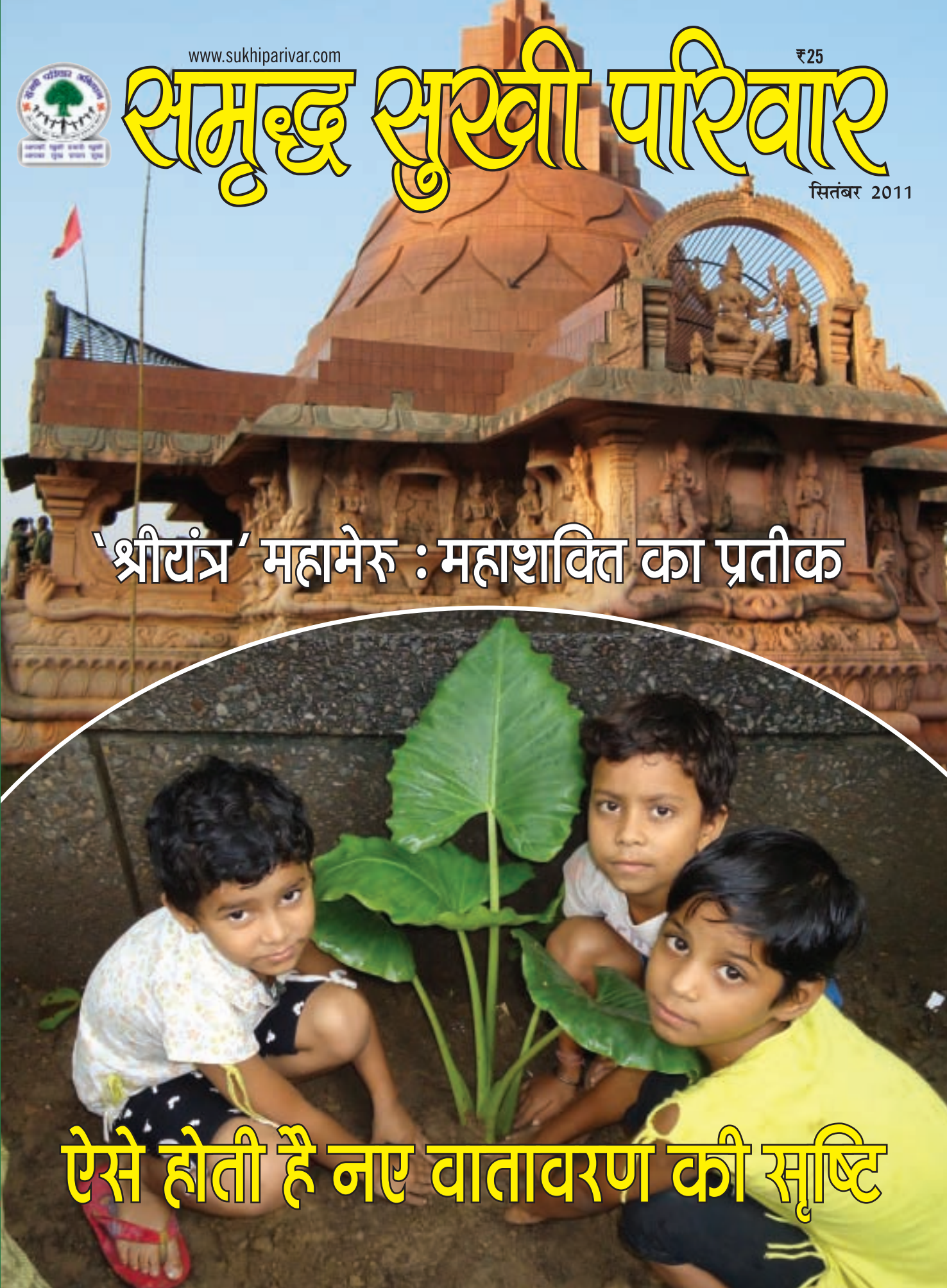

'श्रीयंत्र' महामेरु : महाशक्ति का प्रतीक

ऐसे होती है नए वातावरण की सृष्टि

VASU CREATION

B-4/1626,RAI BAHADUR ROAD,LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS,

-: SPECIALISTS IN :-

❖LONG KURTA ❖3PC SET ❖MATERNITY WEAR ❖JIM WEAR ❖CAPRI SET & SLEX SUIT.

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 2 अंक : 8

सितंबर 2011, मूल्य : 25 रु.

मार्गदर्शक
गणि राजेन्द्र विजय

परामर्शक
मनीष जैन
अध्यक्ष: सुखी परिवार फाउंडेशन

संपादक
ललित गर्ग
(9811051133)

लेआउट आर्टिस्ट
एम एस बोरा
(9910406059)

संपादक मंडल
दीपक रथ, मितेश जैन, चेतन आर. जैन, दीपक जैन-भायंदर, निकेश जैन, श्रेणिक एम. जैन-मुंबई, चंदू वी. सोलंकी-बैंगलोर, राजू वी. देसाई-अहमदाबाद, मुकेश अग्रवाल-दिल्ली, विपिन जैन-लुधियाना

वितरण व्यवस्थापक
बरुण कुमार सिंह
+91-9968126797
011-29847741

: शुल्क :
वार्षिक: 300 रु.
दस वर्षीय: 2100 रु.
पंद्रह वर्षीय: 3100 रु.

कार्यालय
ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट
25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज
दिल्ली-110092
E-mail: lalitgarg11@gmail.com

7

लोभ बढ़ाता है आत्मा की मलिनता

जीवात्मा में जब 'क्षमा' आत्मसात हो जाती है, क्रोध विभाव तिरोहित हो जाता है, मार्दव धर्म की मृदुता मान की अकड़ को कोमलता में परिवर्तित कर देती है। आर्जव धर्म माया के कपट व्यवहार की विरूपता समाप्त कर देता है तब जाकर शौच धर्म की शुचिर आभा का पर्दापण होता है।

-गणि राजेन्द्र विजय

2	सभी से प्यार से मिलना चाहिए	तुलसीदास
6	गोरखधंधा	वल्लभ उवाच
6	साक्षी भाव से जीवन जीना ही योग है	पतंजलि
8	बेटी का हक	मीनाक्षी पंत
9	मनुष्य की सच्ची संपत्ति है श्रद्धा	डॉ. रामसिंह यादव
10	सज्जनता को संगठित होना चाहिए	रमेशभाई ओझा
11	मनोकामनाएं पूर्ण करता है पीपल	पंडित श्यामसुंदर दास
12	रॉक गार्डन: एक अनोखा पार्क	अलका सैनी
13	परिवार का बदलता स्वरूप	श्री किरीट भाईजी
14	सुरों में बसती असाधारण शक्ति	विवेक जैन
14	सौभाग्यसूचक पक्षी नीलकंठ	सुश्री दोयल बोस
15	विवाह के संस्कार और ईश्वर	अंशुमाली रस्तोगी
15	मां वह बात भी समझ लेती है जो हम नहीं कहते	बेला गर्ग
16	सांस्कृतिक प्रदूषण का बढ़ता प्रभाव	आचार्य श्री रत्नसुंदर सूरीश्वरजी
17	स्वाद-विजय का प्रयोग	आचार्य महाश्रमण
17	भरोसा करें, वरना जिंदगी हो जाती है दुश्वार	एंटन चेखव
18	महापर्व है क्षमापना पर्व	डॉ. मृदुला जैन
19	कर्मयोग एवं संन्यास	डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल'
20	रत्नों का रहस्यमय संसार	अशोक जैन 'सहजानंद'
22	बच्चे तो एक आईना हैं	आर. जे. मौर्य
23	न्यूमरोलॉजी में नंबर-7 का महत्व	नीता बोकाड़िया
23	दिव्य आध्यात्मिक शक्ति है मौन	माला वर्मा
26	ऐसे होती है नये वातावरण की सृष्टि	साध्वी कल्परसाश्री
27	फलदायी है श्राद्ध-कर्म	संदीप कुमार
28	स्त्री होने का दर्द	सत्यनारायण पंवार
28	जैनत्व क्या है?	डॉ. महावीरराज गेलड़ा
29	लाभप्रद है सूर्य चिकित्सा	मंजुला जैन
30	प्रार्थना से जागता है आत्म-विश्वास	आचार्य विजय नित्यानंद सूरि
31	जीवनशैली में बदलाव की संभावनाएं	डॉ. भागरानी कालरा
32	मानव का जीवन	मुनि तरुण सागरजी
32	स्वधर्मे निधनं श्रेय	श्री आनंदमूर्ति
33	संतान प्राप्ति के दुर्लभ उपाय	पं. वागाराम परिहार
34	जीवन का अंतिम सत्य मृत्यु	ताराचंद आहूजा
35	'श्रीयंत्र' महामेरु: महाशक्ति का प्रतीक	डॉ. टी. डी. शर्मा
36	आकुल-विकल हो जाना ही हिंसा है	आचार्य श्री विद्यासागर
37	स्त्रियां पुरुषों से तीन गुना अधिक बोलती हैं	योगी अनूप
37	पूजाघर का महत्व	मुरली कांठेड़
38	स्वर्ग से वापसी मौत से भेंट	प्रो. जमनालाल बायती
39	जोड़ों की सेवा बड़ा पुण्य	कन्हैया अगनानी
40	The Ways of Karma	Sri Sri Ravi Shankar
40	Superhuman Being	Meera Seshadri
41	Mahavira's Family Philosophy	Gani Rajendra Vijay
41	Guru is God	Ramnath Narayanswami
42	संकटमोचक हैं मेंहदीपुर के बालाजी	पुखराज सेठिया
42	चाय एक लाभ अनेक	दोयल बोस
45	स्वयं को देखें	डॉ. विजयप्रकाश त्रिपाठी
45	बूढ़ों की खिलखिलाहट	सुधा गुप्ता 'अमृता'
46	जिंदगी चलती जायेगी	मनीष जैन

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patparganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092.
Editor : Lalit Garg

समृद्ध सुखी परिवार एक ऐसी मासिक पत्रिका है जिसको पढ़ने से छप्पन भोग जैसा रसास्वादन मिलता है। इस पत्रिका में जीवन के विविध पहलुओं- आध्यात्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक, स्वास्थ्य, कला व मनोरंजन इत्यादि पर भरपूर सामग्री मिलती है। पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएं 'जस नाम तस गुण' वाली कहावत को चरितार्थ करती हैं। पत्रिका की जीवनोपयोगिता इसकी लोकप्रियता का आधार है। देश, समाज व परिवार के हित में यह बहुमूल्य पत्रिका घर-घर पहुंचे, ऐसी मैं कामना करता हूं।

-डॉ. जे. पी. सक्सेना
एफ-601, पवित्रा अपार्टमेंट वसुन्धरा
एन्कलेव, दिल्ली-110096

अक्षर-अक्षर दिखी साधना
शब्द-अर्थ पावन लगता है
'समृद्ध सुखी परिवार' है शुभ
यह सूखे में सावन लगता है।

आधुनिकता में नैतिक मूल्य जीवन से निरंतर तिरोहित होते जा रहे हैं। ऐसे में 'समृद्ध सुखी परिवार' संवेदनाओं और अनुभवों के उनके भव से चिंतन का नया आकाश देता है। इस आकाश में सर्जनात्मक वैचारिकता से व्युत्पन्न जीवन की गहरी दीठ है। आपकी रचना चयन क्षमता श्लाघनीय है। पत्रिका का मुखावरण नयनाभिराम है। संपादकीय सुरुचिपूर्ण, पठनीय व सराहनीय है।

-बंशीलाल पारस
ओशो कुंज, टी-14, बापूनगर
भीलवाड़ा-311001 (राजस्थान)

महापुरुषों एवं विभिन्न व्यक्तियों के विचारों से साक्षात्कार कराने वाली पत्रिका 'समृद्ध सुखी परिवार' का मई अंक प्राप्त हुआ।

गणि राजेन्द्र विजयजी की यह उक्ति 'विवेक के साथ सहजता और सहजता के साथ विवेक मानव जीवन की अनिवार्य शर्त है। विचार और विवेक आकर्षक व्यक्तित्व की रीढ़ है। बाहरी सौंदर्य तो गौण है, यौवन ढलने के साथ-साथ शारीरिक सौंदर्य भी घटता जाता है जबकि आंतरिक सौंदर्य अक्षुणय रहता है।' यही इस पत्रिका का मूल मंत्र है। डॉ. अनामिका प्रकाश की रचना 'सात फेरों को क्यों नकार रही है युवतियां' बहुत अच्छी लगी। सुधांशुजी महाराज का कहना बिल्कुल सही है- 'ज्ञान का दीपक जल गया तो कष्ट-क्लेश अपने आप दूर हो जाएगा।' डॉ. जगदीश गांधी का कहना है 'पारिवारिक एकता है विश्व एकता की

आधारशिला'। ऐसी सम्पूर्ण-सर्वांग पत्रिका की आवश्यकता थी जिसे आपने पूरा किया है।

-सत्य नारायण नाटे
नावाटोली, नवकेतन के निकट
डालटनगंज-822101 (झारखण्ड)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका अपने नाम के अनुरूप सुख, समृद्धि व भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की उत्कृष्ट पत्रिका है। इसमें धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य समाहित लेख ज्ञानवर्धन व प्रेरणा के स्रोत नजर आते हैं। पत्रिका रोशनी बांटती रहे, ऐसी कामना है।

-विपिन जैन
के.आई.-147, कविनगर
गाजियाबाद (उत्तरप्रदेश)

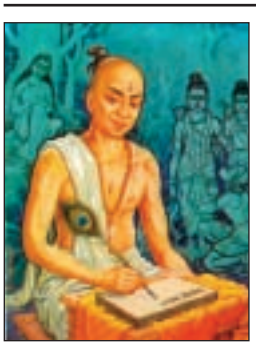

सभी से प्यार से मिलना चाहिए

तुलसीदास

गोस्वामी तुलसीदास का जन्म उत्तरप्रदेश के बांदा जिले के राजपुर में 1532 में हुआ था। शुरू में वह दुनियादारी में आसक्त थे, लेकिन पत्नी रत्नावली का ताना सुनकर रातोंरात परम रामभक्त बन गए। तुलसीदास जी की कई रचनाएं, रामचरितमानस, हनुमान चालीसा, बजरंगबाण, विनय पत्रिका और रत्नावली खासी चर्चित हैं। माना जाता है कि जन्म के समय ही उनके 32 दांत थे और उन्हें रामबोला भी कहा जाता था।

● प्रीत का सुंदर रीत देखिए कि दूध में जल मिला हुआ हो तो वह दूध समान ही दिखता है। प्रेम का संबंध ऐसे ही कपटरहित होना चाहिए। अगर कपट रूपी खटाई उसमें डल जाए तो दूध का स्वाद खत्म हो जाता है।

● इस संसार में सभी से प्रेमपूर्वक मिलना चाहिए क्योंकि न जाने किस वेश में नारायण मिल जाएं।

● अच्छी संगत के बिना विवेक नहीं जागता और विवेक के बिना कोई काम पूरा नहीं होता। अच्छी संगत आनंद और कल्याण करने वाली है।

● जैसे पारस का साथ पाकर लोहा भी सोना बन जाता है, ऐसे ही दुष्ट लोग भी अच्छी संगत में रहकर सुधर जाते हैं। अगर दैवयोग से भले लोग गलत संगति में पड़ भी जाएं तो भी उनके अच्छे गुण कभी-न-कभी अपना प्रभाव दिखाते हैं।

● मित्र, स्वामी, पिता और गुरु के घर बिना बुलाए भी जा सकते हैं, लेकिन वहां अगर आपका विरोध होता हो तो ऐसे घर में जाने से कल्याण नहीं होता।

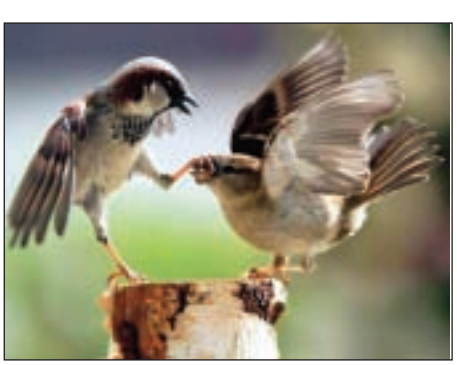

● समरथ को नहीं दोष गोसाईं यानी जो सामर्थ्यवान है, उसके दोष छुप जाते हैं। जैसे गंगा में पवित्र और अपवित्र दोनों तरह के जल बहते हैं, पर गंगा को कोई अपवित्र नहीं कहता।

● होनहार बलवान। जैसी होनी होती है, वैसा वातावरण बन जाता है।

● तेजस्वी दुश्मन को अकेला होते हुए भी कमतर नहीं आंकना चाहिए।

● तीन बुराइयां प्रबल हैं- काम, क्रोध और लोभ।

संपादकीय

यह आंधी लोकतंत्र को शुद्ध सांसें देगी

राष्ट्र में अन्याय, शोषण, भ्रष्टाचार और अनाचार के विरुद्ध समय-समय पर क्रांतियां होती रही हैं। लेकिन उनका साधन और उद्देश्य शुद्ध न रहने से उनका दीर्घकालिक परिणाम संदिग्ध रहा है। लेकिन जे.पी. आंदोलन के बाद अन्ना हजारे का वर्तमान आंदोलन एक ऐसी क्रांति है जिसने न केवल सरकार की चूलें हिला दी है बल्कि भ्रष्टाचार के प्रश्न पर भी लोकशक्ति को जागृत कर दिया है। अब लोक शक्ति जाग गयी है तो सरकार का हिलना स्वाभाविक है। यह अलग बात है कि लोकशक्ति की पदचाप को महसूस किया जाता तो यह स्थिति नहीं देखनी पडती। लेकिन यह राजनीतिक दुर्बलता ही कही जायेगी जिसमें ऐसे संकेतों को नजरअंदाज करने का अहंकार पलता है। ऐसे अहंकार के कारण ही इंदिरा गांधी ने हार को स्वीकारा था और अब वही स्थितियां दोहरायी जा रही है। इन स्थितियों में लोकतंत्र के चारों स्तंभ ध्वस्त दिखायी दे रहे हैं, उनकी पवित्रता नष्ट हो चुकी है।

भ्रष्टाचार तो जैसे वर्तमान सरकार का सर्वोपरि लक्ष्य बना हुआ है। तभी जन लोकपाल बिल को लाने में कोताही बरती जा रही है। एक तरह से अराजकता का माहौल बना हुआ है, आपातकाल जैसी स्थितियां बन गयी हैं। इन हालातों में जनता का आक्रोश सड़कों पर दिख रहा है और इस आक्रोश को एक बार फिर दबाने की कोशिश सरकार के नुमाइंदों ने जिन शब्दों में की है वे बड़े हास्यास्पद है। कैसी विडम्बना है कि जो अनशन और प्रदर्शन गांधी का आजादी दिलाने का सबसे बड़ा हथियार था वही स्वतंत्र भारत में एक अपराध बन गया।

कैसा अजीब लगता है आठवीं बार लालकिला से स्वतंत्रता दिवस का भाषण देने के लिए प्रधानमंत्री को एक बार फिर लिखे हुए भाषण और बेजान शब्दों की ही सहायता लेनी पड़ी। एक अरब इक्कीस करोड़ की विशाल आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाला व्यक्तित्व वर्ष में एक दिन भी यदि हृदय के उद्गारों को जनता से साझा न कर सके तो इससे बड़ी लोकतंत्र की विडम्बना क्या होगी? व्यक्ति बूढ़ा होता है जीवन नहीं। जीवन को तो सदैव तरोताज़ा रखना है। चाहे राष्ट्रीय जीवन हो चाहे सामाजिक जीवन हो। यह भी गंभीर चिंतनीय विषय है कि देश का प्रधानमंत्री कितने लाचारी भरे शब्दों में भ्रष्टाचार की त्रासदी और उससे राष्ट्र के होते खोखलेपन को महसूस करते हुए भी यह कहे कि मेरे पास कोई जादू की छड़ी नहीं है। लगता तो ऐसा है कि भ्रष्टाचार ही क्या उनके पास और भी ऐसी अनेक समस्याएं हैं जिनसे निपटने के लिए कैसी भी छड़ी नहीं है। वे तो बस डंडाधारी हैं और अपने इस डंडे का कभी रामदेव पर तो कभी आम जनता पर इस्तेमाल करते रहते हैं। जिस नेतृत्व ने देश, काल, स्थिति नहीं समझी या जो समय की नब्ज नहीं पहचान सका वह समाज को भटका देता है।

जब-जब भी अहंकारी, स्वार्थी एवं भ्रष्टाचारी उभरे, कोई न कोई अन्ना सीना तानकर खड़ा होता रहा। तभी खुलेपन और नवनिर्माण की वापसी होगी, तभी सुधार और सरलीकरण की प्रक्रिया चलेगी। तभी लोकतंत्र सुरक्षित रहेगा। तभी लोक जीवन भयमुक्त होगा। आखिर कोई भी जन आंदोलन या जनशक्ति क्यों सड़कों पर उतरती है। क्यों संसद को अपने अमूल्य समय का नियोजन इस तरह के आंदोलनों से निबटने के लिए खर्च करना पड़े? संसद अपना कर्तव्य ठीक से पूरा करे, जिन जनप्रतिनिधियों को जनता के हितों की रक्षा के लिए संसद में भेजा गया है वे अपने उन कार्यों और कर्त्तव्यों में पवित्रता एवं पारदर्शिता रखें तो किसी भी जन आंदोलन की जरूरत नहीं होगी। आज जब भ्रष्टाचार एवं विदेशों में जमा काले धन के खिलाफ जन आंदोलन सक्रिय हुए हैं तो सरकार उन्हें असंवैधानिक और ब्लैकमेल बता रही है। क्योंकि वह डर गयी है। वह डर इसलिए गयी है कि भ्रष्टाचार में वही आकंठ डूबी हुई है।

लोकशक्ति जागी है भ्रष्टाचार के खिलाफ। सरकार इस लोकशक्ति से टकराने का दुस्साहस न करे यह अपेक्षित है। जिस जन लोकपाल के लिए अन्ना हजारे आंदोलन कर रहे हैं उस जन लोकपाल विधेयक का बन जाना और उसका सफलतापूर्वक क्रियान्वित होना इस राष्ट्र की प्राथमिकता है। यह एक आंधी है इससे टकराने का अर्थ है तीन साल का कुराज अगले तीस साल का वनवास बन सकता है। जो पार्टी इस देश को अपने अहिंसात्मक सत्याग्रहों, जन आंदोलन के माध्यम से आजादी दिलाई और इन्हीं उद्देश्यों के लिए विश्वविख्यात हुई आज उसी पार्टी के डरे हुए और नादान नेताओं ने इसकी इज्जत धूल में मिला दी है। क्या भ्रष्टाचार के खिलाफ जन आंदोलनों को दबाने के लिए जिस तरह के हथकंडे अपनाये जा रहे हैं वे कांग्रेस जैसी महान पार्टी की शानदार परम्पराओं के अनुकूल है। एक अहिंसक, निहत्थे और बेकसूर सत्याग्रहियों पर डंडे बरसाने वाली कांग्रेस क्या गांधी और नेहरू की कांग्रेस हो सकती है? कैसा विरोधाभासी दृश्य है कि प्रणव मुखर्जी कहते हैं वे कालाधन वापस लायेंगे तो जायज और संवैधानिक है और यही बात रामदेव कहे तो असंवैधानिक है। यह कैसी कानून व्यवस्था या पुलिसतंत्र है कि जिन आरोपों के लिये अन्ना ग्रुप को गिरफ्तार कर सात दिन के लिये तिहाड़ भेज दिया जाता है, उन्हीं लोगों को दो घंटे बाद बिना किसी शर्त के रिहा भी कर दिया जाता है। सत्ता और संपदा के शीर्ष पर बैठकर यदि जनतंत्र के आदर्शों को भुला दिया जाता है तो वहां लोकतंत्र के आदर्शों की रक्षा नहीं हो सकती। गणि राजेन्द्र विजय का स्पष्ट मंतव्य है कि ''तंत्र के शीर्ष पर जो व्यक्ति बैठता है उसकी दृष्टि जन पर होनी चाहिए तंत्र या पार्टी पर नहीं। आज जन पीछे छूट गया और तंत्र आगे आ गया है। इसी कारण जनता को सड़कों पर आना पड़ रहा है।'' आज कुछ ऐसे ही हालात उभरे हुए हैं जिनसे निजात पाने के लिए जनता और सरकार टकराव की मुद्रा में है और मैं इसे एक तरह का समुद्र मंथन मानता हूं जिससे निकलने वाला नवनीत निश्चित इस राष्ट्र को शुद्ध सांसे देगा।

लोकशक्ति जागी है भ्रष्टाचार के खिलाफ। सरकार इस लोकशक्ति से टकराने का दुस्साहस न करे यह अपेक्षित है। जिस जन लोकपाल के लिए अन्ना हजारे आंदोलन कर रहे हैं, उस जन लोकपाल विधेयक का बन जाना और उसका सफलतापूर्वक क्रियान्वित होना इस राष्ट्र की प्राथमिकता है। यह एक आंधी है। इससे टकराने का अर्थ है तीन साल का कुराज अगले तीस साल का वनवास बन सकता है।

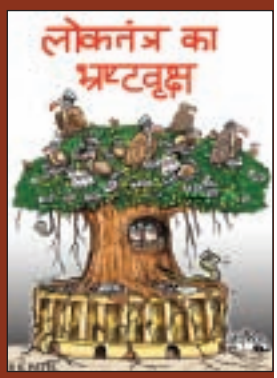

वल्लभ उवाच

गोरखधंधा!

एक संन्यासी का यही प्रवचन विचारणीय है–"विश्व-भगवान का बनाया एक गोरख धंधा है कि उसमें फंसकर संसारी उलझ जाता है और उसका निकलना कठिन हो जाता है। इसलिए–समझदार व्यक्ति को चाहिए कि वह इस मोहमाया, जंजाल से त्राण पाने के लिए, संन्यासी हो जाए और मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयत्न करे।"

मैं इन विचारों से सहमत हूं परन्तु कुछ असहमत भी। यदि सभी संन्यास ले लेंगे तो फिर विश्व का क्रम कैसे चलेगा?

जीवन का लक्ष्य ईश प्राप्ति अवश्य है, परन्तु कर्त्तव्य-कर्म भी तो अपना स्थान रखते हैं। गीता की मुख्य शिक्षा–'कर्म' ही तो है। विश्व को कर्मभूमि की संज्ञा देकर जिस भावनात्मक-कार्मिक सृष्टि का निर्देश किया गया है, उसे गोरखधंधा कहना स्वयं विश्व का अपमान करना है। यह मन की विकृत अवस्था का द्योतक है। विश्व एक सरल कर्मक्षेत्र है। यदि मानव अपना-अपना कर्त्तव्य नियमपूर्वक, सदाचार और निष्ठापूर्वक हृदय से करता है तो उसके लिए मार्ग की जटिलता का होना कोई रुकावट पैदा नहीं करता।

धर्म मानव का मार्गदर्शक है। उसे अंधकार में प्रकाश दिखाने के लिए है। कर्त्तव्यों का बंधन जीवन की वास्तविकता सत्यता है। जो इनके द्वारा अपना जीवन चलाता है उसे गोरख धंधे की जटिलता का डर ही क्यों लगेगा?

अब प्रश्न उठता है–संन्यास का? विश्व के मोहमाया के जंजालों की भयंकरता से घबड़ाकर संन्यासी होने की शिक्षा देना, मानव को कायरता का पाठ पढ़ाना है, और इसलिए मैं असहमत हूं।

जीवन के हर क्षेत्र में मनुष्य हर क्षण किसी न किसी कर्तव्य से बंधा हुआ है। हर मनुष्य को उसका पालन करना अनिवार्य है। उन कर्त्तव्यों का पालन करने के बाद, सभी सांसारिक सुखों का अनुभव प्राप्त करने के बाद, जो संन्यासी होगा उसको अनुभव, प्रत्यक्षता तथा सत्य का बोध होगा। वह संन्यासी अपने संन्यास द्वारा दूसरों का कल्याण करने का साहस कर सकेगा।

मैं विश्व के कथित गोरख धंधे से घबड़ा कर अपरिपक्व-रूप में संन्यास ग्रहण करना, कायरता का लक्षण मानता हूं। क्योंकि इससे वास्तविक कल्याण नहीं हो पायेगा, जिसको निज-कल्याण की इच्छा इष्ट होगी वह दूसरे का कल्याण कैसे करेगा?

जिसने स्वयं संसार के कष्ट नहीं देखे वह इसके असारता का उपदेश क्या देगा?

जिसने अपना कल्याण नहीं किया वह दूसरों का कल्याण क्या करेगा?

यों तो प्रत्येक संसारी स्वयं में संन्यासी है, परन्तु परोक्ष रूप से भी संन्यासी जीवन को अपनाओ, सांसारिक मोहमाया, जंजाल को त्यागने के बाद भी, पेट की भूख, सर्दी गर्मी से रक्षा, शरीर के लिए औषधि आदि की झंझटों से भी क्या संन्यास लोगे भाई?

यह तो असंभव सा लगता है।

तो फिर–

"इस गोरखधंधे को समझो, जीवन का कर्मक्षेत्र एक ऐसी अनुसंधानशाला है, जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार की औषधियों, रसायनों के मिश्रण से जीवन की खोज होती है।

यहां जीवन है, तो विस्फोट भी होंगे, शीतलता का अनुभव करोगे, तो कभी जलन की पीड़ा भी झेलनी होगी।

तो फिर कर्त्तव्य से विमुख हो भागना कायरता नहीं तो ओर क्या है?

साक्षी भाव से जीवन जीना ही योग है

पतंजलि

ईसा पूर्व दूसरी सदी में जन्मे पतंजलि को पहला ऐसा शख्स माना जाता है, जिन्होंने योग को गुफाओं से निकालकर आम आदमी के लायक बनाया। वेदों और उपनिषदों के बाद योग की पहली किताब 'योगसूत्र' पतंजलि ने लिखी। उनके मुताबिक योग आसन और प्राणायाम ही नहीं है, बल्कि इसके कई अंग हैं। उन्होंने योग दर्शन को चार भागों में बांटा–समाधिपाद, साधनापाद, विभूतिपाद और कैवल्यपाद। पतंजलि योगसूत्र में 96 ऐसे सिद्धांत हैं जिनसे जिंदगी के हर क्षेत्र में कामयाबी मिल सकती है।

- योग के आठ अंग हैं- यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और परिधि।
- समाधि हासिल करने के लिए मानसिक क्लेशों को दूर करना जरूरी है।
- साक्षी भाव से जीवन जीना ही योग का असली लक्ष्य है।
- सत्य को मन, वचन और कर्म से अपनाने पर असली धर्म की प्राप्ति होती है।
- बर्फ और पानी एक ही चीज हैं, बस उनमें अवस्थाओं का फर्क है। ठीक इसी तरह कुदरत भी तमाम रूपों में पसरी हुई है।
- कष्ट, निराशा, घबराहट और सांस का तेज चलना इस बात का संकेत हैं कि आपका मन शांत नहीं है।
- योग को अच्छे-बुरे और जन्म-मृत्यु के पार जाने की कला माना जा सकता है।
- मौत पर जीवन खत्म नहीं होता, बल्कि तब संभावना का एक और दरवाजा खुलता है।
- चेतन और अचेतन एक ही अस्तित्व के दो छोर हैं। चेतन अचेतन हो सकता है और अचेतन चेतन होता रहता है।
- जो अणु में है, वह विराट में भी है। जो बूंद में है, वही विराट सागर में भी है।
- देना ही पाना है। जब बूंद सागर में मिलती है तो वह खुद सागर हो जाती है।
- मनुष्य का व्यक्तित्व सात चक्रों में बंटा हुआ है। इन चक्रों में अनंत ऊर्जा सोई हुई है। हर चक्र खोला जा सकता है।
- ध्यान करने से चक्र सक्रिय हो जाते हैं।

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका निम्न वेबसाइट पर भी उपलब्ध है:

www.sukhiparivar.com

www.herenow4u.net

www.checonjainam.org

दिशाबोध

गणि राजेन्द्र विजय

लोभ बढ़ाता है आत्मा की मलिनता

जहां सम्यक् रूप में विशुद्धि हो, राग का अंशमात्र भी शेष न हो वहां मोहनीय कर्म अशेष होने लगता है। भावों में शुचिता लाने के लिये लोभवृत्ति अथवा आकांक्षा का पूर्णत: त्याग अवश्यम्भावी है। जीवात्मा में जब 'क्षमा' आत्मसात हो जाती है, क्रोध विभाव तिरोहित हो जाता है, मार्दव धर्म की मृदुता मान की अकड़ को कोमलता में परिवर्तित कर देती है। आर्जव धर्म माया के कपट व्यवहार की विरूपता समाप्त कर देता है तब जाकर शौच धर्म की शुचिर आभा का पर्दापण होता है। वीतरागता उत्तम शौच धर्म के बिना नहीं आ सकती। लोभ कषाय मोहनीय कर्म की सुदृढ़ जंजीर है अत: इसका बन्धन अंत तक रहता है, जब इसका अभाव हो जाता है तभी शौच धर्म प्रकट होता है।

लोभ का अत्यधिक कम हो जाना शौच धर्म के अन्तर्गत आता है। ग्रहण और संग्रह किया हुआ लोभ एकदम परित्याग नहीं हो सकता। अपितु क्रमश: कम करना आवश्यक है।

लोभी व्यक्ति क्या-क्या नहीं करता, आचार्य शुभचन्द्र ने ज्ञानर्णव में बड़ा सुन्दर लिखा है-

इस लोभ कषाय से पीड़ित हुआ व्यक्ति अपने मालिक, गुरु बन्धु, वृद्ध स्त्री, बालक तथा क्षीण दुर्बल अनाथ दीनादि को भी नि:शंकता से मारकर धन ग्रहण करता है।

इस प्रकार नरक ले जाने वाले जो दोष सिद्धान्त शास्त्रों में कहे गये हैं वे सब लोभ में प्रकट होते हैं, इसीलिये लोभ को पाप का बाप कहा है। संसार में परम्परा रूप से देखने में आता है मनुष्य लोभ लालच के कारण ही बड़े से बड़ा अपराध और दुष्कर्म करता है।

राजवार्तिक में आचार्य अकलंक देव ने लोभ के चार प्रकार बताये हैं-

1. जीवन लोभ, 2. आरोग्य लोभ, 3. इन्द्रिय सुख का लोभ, 4. उपभोग लोभ। इनमें कहीं भी धन का उल्लेख नहीं है। परन्तु धन सहकारी है।

आचार्य अमृतचन्द्र ने 'तत्वार्थसार' में निम्नलिखित चार प्रकार बताये हैं- (1) भोग, (2) उपभोग, (3) जीवन, (4) इन्द्रिय विषयक सुख।

विहंगम दृष्टि से देखा जाए तो उपरोक्त प्रकारों में विशेष अंतर नहीं है। सभी में शारीरिक सुख ही मुख्य है परन्तु लौकिक रूप से धन के प्रति लालसा या आसक्ति को ही लोभ कहा जाता है। वैसे भी लालसा, लालच, तृष्णा, अभिलाषा, आसक्ति आदि शब्द पर्यायवाची ही प्रतीत होते हैं, सभी में रागात्मक राग मुख्य है। जगत में दानी और धर्मात्मा दिखने वाले लोभियों की भी कभी नहीं है। इसके अतिरिक्त यश, मान, रूप, नाम, काम, पद आदि का भी लोभ होता है और इन इच्छाओं की पूर्ति के लिए धन पानी की तरह बहाया जाता है। वास्तव में लोभ सबसे सुदृढ़ कषाय है।

समता, संतोष और अनासक्ति का उत्तम स्वरूप शौचधर्म है। अत: सारे संकल्प-विकल्प, आधि-व्याधि और उपाधि और व्यामोह को छोड़कर इस आध्यात्मिकता के चरम लक्ष्य का सहचर बनना ही उपयुक्त है।

लोकोक्ति है- 'आधी तज पूरी को घावे, आधी रहे न पूरी पावे।' अत्याधिक लोभ करने वाला न स्वयं सुखी रहता है और न अन्य को सुखी रहने देता है, वह तो हाय हाय में ही मरता है, संसार की गति को देखकर भी वह विवेकहीन और अन्धा ही बन रहता है। वह नहीं सोचता- 'हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश विधि हाथ।' सब कुछ पूर्वकृत पुण्य-पाप पर निर्भर है, फिर क्यों सुख शांति को छोड़, लोभ-वृत्ति में पड़ा है। रूप, वैभव, जीवन, यश, मान कुछ भी लोभ करने से प्राप्त नहीं होता, अपितु पुण्य योग से ही सुख-समृद्धि, मान-सम्मान प्राप्त होता है। मानव के जीवन में जब संतोष की शुचिता आ जाती है तो वह आनन्द से भर जाता है।

आज हमारी नयी पीढ़ी धर्म से विमुख होती जा रही है। इसका एक ही कारण है कि आज बहुत से साधु भी मायाचारी और लोभी हो गये हैं, जिनको देख-देखकर आज का नवयुवक धर्म से विमुख होता जा रहा है। महाभारत (अनुशासन पर्व) में यहाँ तक कहा गया है कि लोभी व मोहग्रस्त पुरुष को कोई नहीं बचा सकता।

लोभ-मोहसमाविष्टं न दैवं त्रायते नरम्॥ (44)

जब तक एक व्यापारी अपने लिए लाभांश की एक निश्चित राशि तय नहीं करता, तब तक वह अनुचित मुनाफा लिए बिना नहीं रहता। शौच परायण होने के लिए उसे निश्चय करना होगा कि मैं एक रुपये पर इतने पैसे लाभ लूंगा, अधिक नहीं। यही सिद्धान्त जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में लागू होता है। इसलिए पहले अपने को सुधारो, पर-दृष्टि को हटाओ, और स्वदृष्टि में अपना समय लगाओ।

नीतिकार कहते हैं -

क: शुचिर्यस्य मानसं शुद्धम् शुचि।

पवित्र कौन है? जिसका मन पवित्र है। पर मन की शुद्धता सबसे कठिन है। मन की शुद्धता/अंतरग की शुद्धि तत्वज्ञान से ही संभव है।

महर्षि व्यास ने कहा है- गृहस्थी हो, चाहे गृहत्यागी, चाहे वेदपाठी हो या गीतापाठी, इन सबमें महत्वपूर्ण है- अन्तरंग शुचिता।

भारतीय संस्कृति का मूलाधार पवित्र मन व पवित्र विचारधारा ही है। शौच धर्म का प्रभाव कषायों को नष्ट कर देता है, जिससे हमारा मन पवित्र बनता है।

आचार्य पूज्यपाद ने कहा है-

जलेन जनितं पंकं जलेन परिशुद्धयति।
चित्तेन जनित कर्म चित्तेन परिशुद्धयति॥

मिट्टी में पानी गिरने से वहाँ कीचड़ हो जाता है और वह कीचड़ हाथ-पैर में लग जाये तो उसे साफ भी पानी से ही किया जाता है। इसी

आज हमारी नयी पीढ़ी धर्म से विमुख होती जा रही है। इसका एक ही कारण है कि आज बहुत से साधु भी मायाचारी और लोभी हो गये हैं, जिनको देख-देखकर आज का नवयुवक धर्म से विमुख होता जा रहा है।

तरह से मन से ही पाप होता है और मन से ही पाप धोया जा सकता है।

मन शुद्ध होगा तो विशुद्धि होगी, जिसका मन ऊँचा है, शुद्ध है, पवित्र है, उसका भाग्य भी ऊँचा है, पवित्र है। बिना मन की पवित्रता के भाग्य ऊँचा नहीं हो सकता।

बंध व मुक्ति इन दोनों के लिए प्रवृत्ति चेतना से ही प्रारम्भ होती है। दोषों व अच्छाइयों, गुणों व अवगुणों का भंडार मन ही है। अपनी शुचिता स्वयं को ही प्रकट करनी होगी, कोई अन्य उसे प्रकट नहीं कर सकता।

आत्मानुशासन में आचार्य कहते हैं कि लोभ का कोई अंत नहीं है, यह ब्रह्माण्ड जैसा विशाल है।

एक अकेले व्यक्ति का लोभ का गड्ढ़ा इतना विशाल है कि इस पृथ्वी की समस्त वस्तुएं उसमें समा जाये परन्तु गड्ढ़ा पूर्ण न हो पाएगा। जब एक व्यक्ति का लोभ इतना विशाल है, तो विश्व में तो अनन्त प्राणी हैं, उनके लोभ की संतुष्टि कहाँ से हो सकती है? इसीलिए आचार्यों ने बार-बार कहा कि - भले प्राणी! गृद्धता मत रखो, गिद्ध जैसी आसक्ति मत रखो।

गौतमबुद्ध ने भी लंकावतार सूत्र में कहा है कि - जो रसनेन्द्रिय में आसक्त है, वह गिद्ध के समान है।

संसार में अछूत नाम की यदि कोई चीज़ है तो वे हैं- क्रोध, मान, माया और लोभ। बाहर की चीज़ों का तिरस्कार करते हुए अनन्त काल बीत गया पर एक बार अपने अंतरंग के शूद्रों को हटाओ। दुनिया को सुधारने वाले सब डूब गये। जिन्होंने अपने को सुधारा, वे अमर हो गये। क्रोध, मान, माया, लोभ इन अन्तर में बैठे हुए शूद्रों का तिरस्कार ही आत्मा का सच्चा आदर है। शास्त्रों में लोभ को सर्वोपरि पाप के रूप में वर्णित किया गया है। हम अन्य कषाय को यथाकिंचित् कम भी कर लेते हैं पर लोभ शत्रु पर विजय पाना अत्यन्त कठिन है। मंदिर वीतराग परमेश्वर की दुकान है। वहाँ जाकर भी यदि हम धन-सम्पत्ति, पुत्र-पौत्र की आकांशा/वांछा रखते हैं तो यह हीरे की दुकान पर जाकर कांच की तलाश के समान हास्यास्पद ही है।

आर्य अपने जीवन के प्रत्येक विभाग को शुद्ध रखते थे। अशुचिता को अस्पृश्य मानते थे। आज के लोगों का आचरण भिन्न है। वे मन से अशुचि रहेंगे किन्तु बाहरी अस्पृश्यता का प्रदर्शन करेंगे। कूड़े स्थान के समीप से निकलेंगे तो नाक पर इत्र में डूबा रूमाल रख लेंगे परन्तु अपने भीतर जो विचारों की, व्यवहारों की, सदोष आचरणों की गन्दगी भरी है, उसकी दुर्गन्ध उन्हें नहीं आएगी। जो व्यक्ति अपनी शुचिता की ओर ध्यान देता है, वही सफल हो सकता है।

शारीरिक आरोग्य के लिए जैसे शुद्ध वायु की आवश्यक है वैसे ही मानसिक आरोग्य तथा आध्यात्मिक दीर्घायुष्य के लिए शौच की, पवित्रता की आवश्यक है। चन्द्रमा से जैसे उसकी शीलतता अलग नहीं उसी प्रकार शौच धर्म से मन:शांति अलग नहीं। सम्पूर्ण आकुलताओं का मूल लोभ है और सम्पूर्ण सुखों का मूल शौच है।

शारीरिक स्वच्छता में हम अपनी सारी उम्र गंवा देते हैं, पर हमारा यह सारा प्रयत्न स्नान के पश्चात् सिर पर धूल उछालने वाले हाथी की तरह ही निरर्थक है। ऊपरी स्वच्छता और शृंगार से रचे-पचे न रहकर हमें इस अनमोल मनुष्य भव में अन्तर-शोधन का व्रत लेना चाहिए। कायक्लेश हेतु किये गये जप, तप, संयम तभी सार्थक होंगे जब हमारी विषयासक्ति धीरे-धीरे मंद हो और अंत में शुद्धोपयोग की पवित्र अग्नि से हम इन्हें नष्ट कर सकें।

उत्तम शौच धर्म माया, मिथ्या, निदान इन तीन दोषों को हटा देता है और सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र को स्थापित करता है।

सब लोभ के वशीभूत धन-सम्पत्ति एकत्रित करते हैं, पर हम देखते हैं कि इस विश्व में किसी की भी सम्पत्ति स्थिर नहीं रह सकी है। जब धन स्थायी नहीं है, तो लोभ किसलिए।

हमारा लक्ष्य आत्म-शुद्धि की ओर होना चाहिए। हमारी दृष्टि आत्म-विशुद्धि की ओर जितनी जाएगी, उतनी ही रुचि बढ़ेगी। सम्यग्दर्शन की निर्मल की भूमि उतनी ही पुष्ट होती जाएगी और जितनी पर-पदार्थ की ओर रुचि बढ़ेगी, उतनी ही आत्मा की मलिनता बढ़ेगी, जितनी आत्मा की मलिनता बढ़ेगी, मिथ्यादर्शन की ओर गति होगी।

बेटी का हक

मीनाक्षी पंत

बड़ी विडम्बना है हमारे देश की कि हम जिस बेटी को पैदा होते ही एक बोझ समझ बैठते हैं, एक स्त्री के रूप में उसी 'बोझ' के साथ सारी जिंदगी भी बिताना चाहते हैं। बचपन से लेकर मरने तक एक स्त्री अलग-अलग रूप में हमारा साथ निभाती चलती है। जिसके बिना आदमी एक पल भी नहीं गुजारना चाहता, उसे ही कुछ लोग कभी मुसीबत तो कभी बोझ समझ कर जीते जी मार डालते हैं। दहेज और समाज की अन्य कुरीतियों को स्त्री के अस्तित्व के साथ जोड़ कर देखना लोगों के नकारात्मक सोच और कमजोर व्यक्तित्व का परिचय है। आदमी क्या इतना कमजोर और आलसी भी हो सकता है कि जिंदगी में जो परेशानी (?) बाद में आने वाली हो, उससे डर कर वह एक ऐसे मासूम का खून कर दे, जिसने अभी दुनिया में कदम भी नहीं रखा है? आज न जाने कितनी बेटियां माता-पिता का सहारा बनी हुई हैं और उनकी परवरिश कर रही हैं या बेटों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही हैं। वे अपने साथ पूरे परिवार को पाल सकने की हिम्मत रखती हैं।

सच तो यह है कि बेटियां बचपन से ही अपने आपको इस कदर बनाए रखती हैं कि कभी भाई का साथ देती हैं तो कभी सुख-दुख में मां-बाप का सहारा बनती हैं। शादी के बाद अपने पति के परिवार को खुशी देना और जीवन भर उसका साथ निभाने की जिम्मेदारी भी उसी की होती है। फिर लड़कियां ऐसा कौन-सा गुनाह करती हैं कि लोगों के दिलों तक उनकी भावनाएं नहीं पहुंच पातीं और उनके दिल में इनकी हत्या कर देने का ख्याल आ जाता है? इससे तो यही लगता है कि जो भी इनकी हत्या के बारे में सोचता है वह या तो दिमागी तौर पर ठीक नहीं होता या फिर वह पूरी तरह पितृसत्तात्मक व्यवस्था और मानसिकता का गुलाम होता है।

आज अगर बहुत-सी मासूम बच्चियों की जान सिर्फ उनके लड़की होने के कारण ले ली जाती है तो उसके पीछे ऐसा ही नकारात्मक सोच है। हमें अपना सोच बदलना होगा। बेटियों के अस्तित्व पर ही दुनिया और सृष्टि का अस्तित्व टिका हुआ है। अकेले बेटे से घर को नहीं चलाया जा सकता। उसके लिए बेटियों का होना ज्यादा जरूरी है। इतनी छोटी-सी बात हमें समझनी होगी। यह बात उस वक्त भी उतनी ही सही थी जब बेटियों को सिर्फ व्यवस्था के गुलाम के तौर पर देखा जाता था और आज जब उसने लड़ कर अपना हक हासिल करना सीख लिया है, तब भी उतनी ही सही है। जीवन के लिए जितना जरूरी मर्द है, उससे ज्यादा औरत। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि दोनों की तुलना बराबरी पर होनी चाहिए। जितना हक बेटे का है, उतना ही बेटियों का भी। इनके अनुपात में बढ़ते फासले का असर हम देश के कुछ समृद्ध इलाकों में भी देख रहे हैं कि लड़कों की शादी में कितनी परेशानी आ रही है। यह उसी मानसिकता का हश्र है, जिस पर हम गर्व करते रहे हैं।

डॉ. रामसिंह यादव

मनुष्य की सच्ची संपत्ति है श्रद्धा

श्रद्धा मानव जीवन की अमूल्य निधि है। मनुष्य की सच्ची संपत्ति श्रद्धा से हृदय रसमय, प्रेममय व ज्ञानमय हो जाता है। श्रद्धालु व्यक्ति पत्थर की मूर्ति से अपने इष्ट को प्रकट कर सकता है। मानवीय संबंधों को विशाल प्रासाद अर्थात समाज श्रद्धा रूपी नींव पर आधारित होता है। इसलिए ऋग्वेद में यह प्रार्थना की गई है कि 'हे श्रद्धा देवी, हमारे जीवन को श्रद्धायुक्त कर दें।'

श्रद्धा रखों कि आप संसार में पचने, मरने के लिए नहीं आए। आप उस परम पिता परमात्मा ईश्वर भगवान के अमृत पुत्र हैं और आप निगुरे या निर्गुणी नहीं है। गुरु का मंत्र आपके साथ है फिर अपनी दुर्गती कराने वाले कर्म और विचार में क्यों गिरना? आप चिंता क्यों करो? आप भयभीत क्यों होओ? जरा से संकट में धैर्य क्यों खोना? बाधाएं और चिंताएं मन में आती जाती है। मैं उनको जानने वाला परमात्मा का अमृत पुत्र इंसान हूं। इस प्रकार श्रद्धा और एकाग्रता से रोज अभ्यास करना चाहिए। कोई चाहे आपके लिए कैसा भी सोचे, लेकिन आप गहराई से श्रद्धा के साथ सोचे कि आप सच्चिदानन्द स्वरूप है। आप हर समय श्रद्धावान अवश्य रहे।

श्रद्धा शब्द 'श्रत:' और 'धा' दो शब्दों का समन्वित रूप है जिसमें 'श्रत' का अर्थ होता है सत्य और 'धा' का अर्थ है धारण करना अर्थात श्रद्धा का अर्थ है सत्य को धारण करना। वास्तव में मन, वचन, और कर्म से सत्य को धारण करना ही श्रद्धा है।

वर्तमान समाज की आपाधापी में मानव जीवन श्रद्धा के अभाव अथवा कमी को प्रदर्शित करता है। श्रद्धा के अभाव में आज मनुष्य में दानव एवं हिंसक वृत्तियों की वृद्धि होती जा रही है। श्रद्धा की कमी के कारण आज पुत्र माता-पिता की उपेक्षा कर रहा है। शिष्य अपने गुरु का अनादर, अवमानना कर रहा है, पति-पत्नी एक दूसरे का तिरस्कार कर रहे हैं।

प्राचीन भारतीय संस्कृति व्यक्ति के व्यक्तित्व में श्रद्धा को कूट-कूट कर भरती थी। बच्चे को प्रारंभ से ही 'मातृ देवो भव', 'पितृ देवो भव', 'आचार्य देवो भव', 'अतिथि देवो भव' आदि की शिक्षा दी जाती थी। यही कारण है कि उस समाज में मनुष्य के अंदर श्रद्धा के चरमोत्कर्ष रूप में दर्शन होते थे। प्राचीन भारतीय इतिहास में इस प्रकार के उदाहरण आलोकित होते हैं- यथा अपने पिता के प्रति असीम श्रद्धा के कारण मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने राजपाट छोड़कर चौदह वर्ष का समय जंगलों में व्यतीत किया। नेत्रहीन पति के प्रति अगाध श्रद्धा की ही अभिव्यक्ति थी कि गांधारी ने अपने नेत्रों का उपयोग नहीं किया और अपनी आंखों को पट्टी से सदैव आवृत रखा। अपने पति के प्रति अटूट श्रद्धा के वशीभूत होकर सावित्री मृत पति सत्यवान के साथ यमलोक तक गयी और पति को जीवित करा लिया। धर्म के प्रति अथाह श्रद्धा से प्रेरित होकर गुरु गोविंदसिंहजी ने अपने दो बेटों को दीवार में चुनवा दिया।

इसी प्रकार प्रेम-सत्य एवं अहिंसा के सिद्धांतों के प्रति अटल श्रद्धा के लिए महात्मा ईसा मसीह फांसी पर लटक गए। अपने अहिंसा के सिद्धांत के प्रति अपार श्रद्धा के कारण ही महात्मा गांधी (बापू) ने अपने सीने पर गोली खाई।

श्रद्धा विश्वास की जननी है। श्रद्धा ही ईश्वर प्राप्ति का आधार है। श्रद्धा से ही गुरु का आशीर्वाद मिलता है। श्रद्धा से ही ईश्वर का ज्ञान होकर परम शांति प्राप्त होती है। श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में ही गोस्वामी तुलसीदासजी ने शंकर को विश्वास तथा भवानी को श्रद्धा का प्रतीक बताते हुए कहा है-

भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धा विश्वास रूपिणों।
याभ्यां बिना न पश्यन्ति सिद्धा स्वान्तः स्थमीश्रवरम्॥

अर्थात् श्रद्धा और विश्वास के स्वरूप भवानीजी और शंकरजी की मैं वंदना करता हूं जिसके बिना सिद्धजन भी अपने अंत:करण में स्थित परमेश्वर को नहीं देख सकता। इस प्रकार श्रद्धा विश्वास ही भक्त की संपत्ति मनुष्य की पूंजी है, दूसरी ओर मूर्ति पूजा से मूर्ति के साथ भक्त की श्रद्धा भावना जुड़ी रहती है। जो मूर्ति को भगवान बना देती है। एक शिल्पकार और भक्त ने कहा है-

शुक्र कर या खुदाया मैंने तुझे गढ़ा-बनाया,
तुझे कौन जानता था, मेरी बंदगी से पहले।

वास्तव में एक भक्त द्वारा श्रद्धारूपी प्राण फूंकने पर ही मूर्ति जागरूक होती है, वह भगवान बन जाती है।

एक बार यवन सम्राट आखेट पर जंगल से दूर निकल गया, जहां उसे संध्या हो गई। अत: वह यवन बादशाह घोड़े से उतरा और जमीन पर चादर बिछाकर नमाज पढ़ने लगा। इधर एक स्त्री अपने पति की खोज में व्याकुलता से दौड़ी जा रही थी। उसका पति प्रात:काल वन को गया था और सायंकाल तक घर नहीं लौटा था। वह स्त्री बादशाह की चादर पर पैर रखती हुई चली गई। यह देख यवन सम्राट को बहुत क्रोध आया किन्तु चूंकि बादशाह नमाज पढ़ रहा था इसीलिए उस समय स्त्री से कुछ नहीं बोला। बादशाह नमाज पढ़कर उठा ही था कि वह स्त्री पुन: अपने पति को साथ लेकर विकलताहीन सहज गति से लौटी आ रही थी। बादशाह ने उसे रोककर कहा-''मूर्ख स्त्री अभी तू मेरी नमाज की चादर पर पैर रखकर चली गई।''

स्त्री ने मुस्कराकर कहा कि मैं तो अपने पति के ध्यान में व्याकुल थी इसीलिए मुझे आपकी चादर दिखाई नहीं दी, किन्तु आप तो नमाज पढ़ रहे थे, आपको तो ईश्वर उस खुदा अल्लाह के ध्यान में श्रद्धा से लीन होना चाहिए। फिर मैं आपको कैसे दिखाई दे गई। निश्चय ही उस स्त्री का कथन सत्य था। संख्या, पूजा-पाठ, नमाज आदि के लिए केवल बैठ जाना ही पर्याप्त नहीं है अपितु आवश्यक है हृदय में सच्ची श्रद्धा, जिसके बिना सब कुछ व्यर्थ है। योग दर्शन में कहा गया है कि श्रद्धा से ही समाधि सिद्ध होती है।

डॉ. राधाकृष्णन ने कहा था कि प्राकृतिक आत्महत्या के अनेक मार्ग हैं किन्तु मानव के जीवित रहने का एक ही रास्ता है यह निष्ठा का, श्रद्धा का, धर्म का मार्ग जो हमें आने वाली वस्तुओं के लिए शक्तिशाली आशा से प्रेरित करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि श्रद्धा मानव जीवन का प्राणतत्व है। श्रद्धा ही मनुष्य की सच्ची संपत्ति है। इसलिए श्रद्धा का महत्व मानव जीवन के लिए सर्वोपरि एवं महत्वपूर्ण है।

-14, उर्दूपुरा, उज्जैन (म.प्र.)

सुपथ

रमेशभाई ओझा

सज्जनता को संगठित होना चाहिए

यह बात सदैव याद रखें कि निराश लोगों के पास ज्यादा बैठना नहीं चाहिए। ये निराशा संसर्गजन्य होती है। उसके कीटाणु आपके मन में भी प्रवेश करते हैं। निराशा का रोग भीतर आते ही आदमी का उत्साह, उसकी शक्ति क्षीण हो जाती है। जिनके जीवन में उत्साह है उनके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं। वे या तो अपने पुरुषार्थ से प्राप्त कर लेते हैं और यदि अपने पुरुषार्थ से नहीं मिलता तो उसे प्रभु की कृपा से प्राप्त कर लेते हैं लेकिन प्राप्त जरूरत करते हैं। कौरव सौ हैं तो क्या हुआ?

पांडव पांच ही सही। हमें पांडवों की ओर देखकर आशावादी होना चाहिए और यह केवल महाभारतकालीन सत्य ही नहीं है। यह सर्वकालीन सत्य है कि विजय संख्या सापेक्ष नहीं, सत्य सापेक्ष होती है। सत्यमेव जयते। पांडव अल्प मत थे लेकिन सत्य के उपासक थे, धर्म के उपासक थे। कृष्ण ने पांडवों का पक्ष नहीं लिया है क्योंकि वो तो धर्म संस्थापनार्थाय आए। श्रीकृष्ण स्वयं हैं सत्य स्वरूप। जो सत्य को नहीं छोड़ता सत्य उसको नहीं छोड़ता। सत्य स्वयं है धर्म का रूप। जो धर्म को नहीं छोड़ेगा तो धर्म भी उसको नहीं छोड़ेगा। जो धर्म की रक्षा करेगा, धर्म उन लोगों की रक्षा करेगा। जिसने सत्य नहीं छोड़ा चाहे उसे सत्य के लिए सत्ता, संपत्ति गवानी पड़ी। लेकिन उस सत्य के बल पर फिर से सत्ता और संपत्ति वापस आ जाती है।

कई बार संख्या बल पर असत्य हावी हो जाता है और असत्य की विजय हो जाती है लेकिन यह कोई विजय नहीं है। वह समाज के लिए खतरा है। पांडव पांच ही सही, हैं जीवन जीने का सबसे बड़ा आश्वासन। ये सज्जन लोग, पांडव, दाशरथी वृत्ति के लोग निष्क्रिय न रहें। सज्जनता सक्रिय होनी चाहिए। इसलिए समाज को दुर्जनों के मुकाबले सज्जनों की निष्क्रियता से ज्यादा नुकसान होता है। अंधकार अपने आप में कोई समस्या नहीं है। दीप जलाने के प्रयासों का अभाव ही समस्या है। अंधकार समस्या है तो वहां उसका समाधान भी तो है। दिया जलाओ। अंधकार को कोसते रहते बैठे मत रहो। अंधकार को गालियां सुनाना, अंधकार की निंदा करना, यह कोई इस समस्या का हल नहीं है। इससे अच्छा है एक दीप जलाओ।

हर व्यक्ति दीप जलाएगा, हर व्यक्ति अपने जीवन को दीपक की तरह प्रज्वलित करेगा और प्रकाश देने के लिए स्वयं जलेगा तो अंधेरा अपने आप छंट जाएगा। जलो लेकिन दिये की तरह। किसी की तरक्की और संपत्ति देखकर मत जलो। आज के बुद्धिजीवी एवं पढ़े-लिखे हाई सोसायटी के लोग आराम से सोफे पर बैठे हुए चाय की चुस्की लेते हुए राष्ट्र की समस्याओं की खूब चर्चा करते हैं, आज की राजनीति की क्या दिशा और दशा है उसकी निंदा करते हैं, लेकिन उन समस्याओं को सुलझाने के लिए अपने को दीपक बनाने की तैयारी बहुत कम लोग करते हैं। यह सत्य है कि हम दीपक बन सारी दुनिया के अंधकार को तो मिटा नहीं सकते, लेकिन कम से कम अपने आसपास के स्थान को तो आलोकित कर ही सकते हैं। दीपक की पूजा पहले होती है क्योंकि वह स्वयं जलता है औरों को प्रकाश देता है। पहली बात है कि व्यक्ति सज्जन हो, दूसरी बात कि सज्जन सक्रिय हो और तीसरी बात यह भी जरूरी है कि सक्रिय सज्जनों का संगठन हो। आज भी समाज में सज्जनों की कोई कमी नहीं है। सज्जन सक्रिय और संगठिन नहीं है। इसलिए सज्जनता दुर्जनता के सामने परास्त होती है। दुर्जनों का संगठन असंगठित सज्जनता को परास्त कर देता है, पर निराश न हों। विजय तो सत्य की ही होती है।

हमारे संरक्षक

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका के नियोजित प्रकाशन के लिए 11,000/– रुपये की राशि प्रदत्त करने वाले संरक्षक सदस्य होंगे जिन्हें पत्रिका आजीवन निःशुल्क प्रेषित की जायेगी और पत्रिका में उनका नाम प्रकाशित किया जाएगा। हमारे प्रथम संरक्षक सदस्य हैं–

श्री जयंतीलाल वालचंद खींचा

निवासी घानेराव, प्रवासी अंधेरी वेस्ट मुम्बई

महिमा

पंडित श्यामसुंदर दास

मनोकामनाएं पूर्ण करता है पीपल

जन सामान्य में पीपल के संबंध में अनेक भ्रांतियां और अंध-विश्वास व्याप्त हैं। यह आम धारणा है कि पीपल के वृक्ष पर ब्रह्म राक्षस एवं भूत-प्रेतों का वास होता है। दाह-संस्कार के बाद जो अस्थियां चुनी जाती हैं, उन्हें एक लाल कपड़े में बांधकर एक छोटी-सी मटकी में रख पीपल के वृक्ष पर टांगने की प्रथा भी है। यह इसलिए कि विसर्जन के लिए चुनी गयी ये अस्थियां घर नहीं ले जायी जा सकतीं, अत: उन्हें पीपल के वृक्ष पर टांग दिया जाता है। इस कारण भी पीपल के विषय में अंध-विश्वास बढ़ा है। कर्मकांड में विश्वास रखनेवाले लोगों की मान्यता है कि पीपल के वृक्ष पर ब्रह्मा का निवास होता है। श्रीकृष्ण ने भी गीता में अर्जुन से कहा था कि 'हे पार्थ, वृक्षों में पीपल मैं हूं।'

पीपल अक्षय वृक्ष

पीपल को कभी क्षीण न होनेवाला अक्षय वृक्ष माना गया है। जड़ से ऊपर तक का तना नारायण कहा गया है और ब्रह्मा, विष्णु, महेश ही इसकी शाखाओं के रूप में स्थित हैं। पीपल के पत्ते संसार के प्राणियों के समान हैं। प्रत्येक वर्ष नये पत्ते निकलते हैं। पतझड़ होता, मिट जाते हैं, फिर नये पत्ते निकलते हैं। यही जन्म-मरण का चक्र है। पीपल के वृक्ष के नीचे गौतम को इस तथ्य का बोध हुआ था और वे बुद्ध कहलाये थे।

फरीदाबाद के ज्योतिषाचार्य पं. श्याम सुंदर वत्स ने अपने श्री बजरंग नवग्रह अनुसंधान एवं जीवन प्रदायन केन्द्र में पीपल के विषय में शोध भी किया है। उनका कहना है कि मात्र पीपल की पूजा करने से समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति हो सकती है। उनका विश्वास है कि पितृ-प्रकोप अर्थात पितरों की नाराजगी के कारण भी कोई व्यक्ति जीवन में विकास नहीं कर पाता। पितरों को प्रसन्न करने का एकमात्र सरल, सहज उपाय है, पीपल की पूजा। पितरों को प्रसन्न करने के लिए इस विधि से पीपल की पूजा की जाए, तो तत्काल फल मिलता है। पीपल की पूजा की उनकी विधि इस प्रकार है-

पीपल के नीचे संकल्प

रविवार की रात्रि को भोजन के बाद पीपल की दातौन से दांत साफ करें, फिर स्नान कर पूजन सामग्री लेकर पीपल के वृक्ष के नीचे जाएं। जल लेकर संकल्प करें कि मैं इस जन्म एवं पूर्व जन्म के पापों के नाश के लिए यह पूजन कर रहा हूं। फिर यह संकल्पित जल जड़ में छोड़ दें। गणेश-पूजन कर पीपल वृक्ष को गंगाजल तथा पंचामृत से स्नान कराएं और तने में कच्चा सूत लपेटकर, जनेऊ अर्पण करें। पुष्पादि अर्पण कर आरती करें और नमस्कार कर वृक्ष की 108 बार परिक्रमा करें। प्रत्येक परिक्रमा पर वृक्ष को मिष्टान्न अथवा बताशा अर्पित कर एक फल और एक दीप जलाएं। अर्थात 108 बताशे और 108 दीपक जलाएं।

पंडित वत्स का कहना है कि सोमवती अमावस्या पर इस तरह पीपल-पूजन से तत्काल फल मिलता है। यों, यह प्रयोग किसी भी अमावस्या को किया जा सकता है।

पंडित वत्स का कहना है कि यों भी पीपल में अनेक गुण हैं। जैसे पीपल की दातौन करने से और रस चूसने से मलेरिया या अन्य प्रकार के ज्वर उतर जाते हैं। खांसी या दमा में भी यह लाभदायक है। पीपल के सूखे पत्तों को कूटकर, कपड़छान कर एक रत्ती चूर्ण शहद में लेने से तत्काल लाभ होता है। पीपल के कोमल पत्तों का रस गरम कर कान में डालने से कान का दर्द, कान का बहना ठीक हो जाता है। कोमल पत्तों का रस शहद में मिलाकर अंजन करने से आंख की लाली, फूला आदि में आराम मिलता है। नेत्र ज्योति बढ़ती है।

> "पीपल की रक्षा के लिए ही संभवत: उसमें ब्रह्मा आदि देवताओं के निवास की कल्पना की गयी और कालांतर में उसमें ब्रह्म राक्षस का निवास भी कल्पित कर लिया गया, ताकि लोग भयभीत हो, वृक्ष को हानि न पहुंचाएं।"

सबसे अधिक ऑक्सीजन पीपल से

पीपल की एक और विशेषता है। तुलसी के अतिरिक्त यही वृक्ष दिन-रात ऑक्सीजन प्रवाहित करता है। वह अशुद्ध वायु अर्थात वातावरण की कार्बन डी ऑक्साइड को ग्रहण करता है और दिन-रात शुद्ध वायु छोड़ता है। शायद यही कारण है कि हिन्दू धर्म में पीपल की लकड़ी काटना, जलाना, पाप समझा जाता है। पीपल की रक्षा के लिए ही संभवत: उसमें ब्रह्मा आदि देवताओं के निवास की कल्पना की गयी और कालांतर में उसमें ब्रह्म राक्षस का निवास भी कल्पित कर लिया गया, ताकि लोग भयभीत हो, वृक्ष को हानि न पहुंचाएं।

–श्री बजरंग नवग्रह अनुसंधान एवं जीवन प्रदायन केन्द्र,
लघु सचिवालय मार्ग, फरीदाबाद (हरियाणा)

पर्यटन

अलका सैनी

रॉक गार्डन : एक अनोखा पार्क

भारत में एक अजूबा है रॉक गार्डन, और इस अजूबा के सृजनकार हैं नेकचंद सैनी, जो न सिर्फ भारत में बल्कि पूरी दुनिया में बेशुमार ख्याति प्राप्त की है जो कि हम सब भारतीयों के लिए गौरव की बात है। वे एक बहुत ही सीधे-सादे इंसान है। अंतर्राष्ट्रीय हस्ती होने के बावजूद भी उनके चेहरे पर घमंड या अपने उच्च पद के कोई भाव देखने को नहीं मिलते। यही एक बड़े इंसान की बड़प्पन की निशानी है। उन्होंने रॉक गार्डन का निर्माण करके ना केवल अपना बल्कि भारत का नाम पूरे विश्व में ऊंचा कर दिया। विदेशों से भी उन्हें कई बार रॉक गार्डन की तरह पार्क बनाने का न्योता आ चुका है। रॉक गार्डन के निर्माण से नेकचंद सैनी का नाम रहती दुनिया तक लोगों की जुबान पर रहेगा।

चण्डीगढ़ के सैक्टर-1 में रॉक गार्डन बना हुआ है। यह चालीस एकड़ के क्षेत्र में फैला हुआ है।

चण्डीगढ़ में जब निर्माण का कार्य शुरू हुआ तब नेकचंद को 1951 में सड़क निरीक्षक के पद पर रखा गया था। नेकचंद ड्यूटी के बाद अपनी साइकिल उठाते और शहर बनाने के लिए आस-पास के गांवों में टूटा-फूटा सामान इकट्ठा करके ले आते। सारा सामान उन्होंने पी.डब्ल्यू.डी. के स्टोर के पास इकट्ठा करना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे अपनी कल्पना के अनुसार उन टूटी हुई चीजों को आकार देना शुरू कर दिया। अपने शौक के लिए छोटा सा एक गार्डन बनाया और धीरे-धीरे उसे बड़ा करते गए। उस समय चण्डीगढ़ की आबादी नामात्र ही थी। वह यह काम चोरी छिपे काफी समय तक करते गए और काफी समय तक किसी की निगाह नहीं पड़ी। सरकारी जगह का इस तरह का उपयोग एक तरह से अवैध कब्जा ही था। इसलिए सरकारी गाज गिरने का डर हमेशा बना रहता था। एक दिन जंगल साफ कराते समय 1972 में एक सरकारी उच्च अधिकारी की इस पर नजर पड़ ही गई। मगर उन्होंने नेकचंद के इस अद्भुत कार्य को सराहा और इस पार्क को जनता को समर्पित कर दिया। उन्हें इस पार्क का सरकारी सब डिविजनल मैनेजर बना दिया गया।

खाली समय में पत्थर एकत्र कर उन्हें तरह-तरह की आकृतियों के रूप में संजोते हुए नेकचंद सैनी ने कभी सोचा नहीं होगा कि एक दिन उनका यह काम अनोखे पार्क के रूप में सामने आयेगा, जिसे देखने के लिए लोग देश-विदेशों से आयेंगे। ध्वस्त मकानों के मलबे से पत्थर जुटाने का काम एक, दो साल नहीं बल्कि पूरे 18 साल तक चला।

नेकचंद कहते हैं कि 18 बरस के समय का ध्यान ही नहीं रहा और कभी सोचा ही नहीं था कि रॉक गार्डन बन जाएगा। सरकारी नौकरी करते हुए मैं तो खाली समय में पत्थर एकत्र करता और उन्हें सुखना झील के समीप लाकर अपनी कल्पना के अनुरूप आकृतियों का रूप दे देता। अब नेकचंद की उम्र करीब 85 साल हो चुकी है और वह बेहद धीरे-धीरे बोलते हैं। वह कहते हैं अब उम्र साथ नहीं देती, वरना मैं इस पार्क में बहुत कुछ करना चाहता हूं। धीरे-धीरे आकृतियां 12 एकड़ के परिसर में नजर आने लगीं। हर तरह की आकृतियां, नृत्यांगना, संगीतज्ञ, पशु, पक्षी, फौजी. .. सब कुछ।

दिलचस्प बात यह है कि पूरा रॉक गार्डन रिसाइकिल की हुई अपशिष्ट सामग्री से बना है। इस अनूठे पार्क का प्रबंधन 'दी रॉक गार्डन सोसायटी' करती है। दूर-दूर से दर्शक नेकचंद की इस कला को देखने के लिए आते हैं।

रॉक गार्डन ने केवल भारत में बल्कि विदेशों में भी लोकप्रिय हुआ। अमेरिका के वाशिंगटन स्थित 'चिल्ड्रेन्स म्यूजियम' के निदेशक एन लेविन ने जब चण्डीगढ़ की यात्रा में रॉक गार्डन देखा तो उन्होंने नेकचंद से अपने यहां ऐसा ही एक पार्क बनाने का अनुरोध किया। नेकचंद मान गए। वाशिंगटन में 1986 में रॉक गार्डन के लिए काम शुरू हुआ और उसके लिए शिल्पकार भारत से भेजे गए।

सरकार ने नेकचंद को अपशिष्ट सामग्री इकट्ठा करने में मदद की और इन्हें पचास मजदूर भी काम करने के लिए दिए थे और आजकल तो यह पार्क इतने बड़े क्षेत्र में फैल चुका है कि कई मजदूर और कारीगर इसके रख-रखाव में रात दिन लगे रहते हैं ताकि चण्डीगढ़ की इस अनमोल धरोहर को संजो कर रखा जा सके। इस गार्डन में सभी मूर्तियां, कलाकृतियां बेकार सामान से बनायी गई हैं। जैसे कि टूटी हुई चूड़ियां, बोतलें, डिब्बे, टीन बिजली वाली टूटी हुई ट्यूबें, बल्ब आदि यानी कि सब काम ना आने वाला सामान यहां इस्तेमाल किया गया है। जिन्हें देखकर कोई भी हैरान हुए बिना नहीं रह सकता।

यहां पानी का एक कृत्रिम झरना भी है। इस पार्क में खुली जगह में एक ऑडिटोरियम भी बनाया गया है जहां पर कई मेलों और कार्यक्रमों का आयोजन होता रहता है। आजकल बच्चों को भी स्कूलों में इसी दिशा में बेकार हुए सामान से आर्ट्स विषय में जरूरत का सामान बनाना सिखाया जा रहा है।

यह पार्क इतना बड़ा है कि घूमते-घूमते पता ही नहीं चलता कि आप कहां से शुरू हुए थे और कहां खत्म होगा। एक के बाद एक छोटे-छोटे दरवाजे आते जाते हैं और सैलानी हैरानी से सब देखते हुए पार्क की भूलभुलैया में खो जाते हैं।

भारत के बाद अमेरिका में नेकचंद की कलाकृतियों का संग्रह है और विदेशों में कई जगह उनकी कला का प्रदर्शन किया जा चुका है। दुख की बात है कि इस पार्क को अपना अस्तित्व बचाए रखने के लिए बहुत जद्दोजहाद करनी पड़ी है। कुछ समय पहले यहां सरकारी गाज गिरी थी जब सरकारी आदेश पर बुलडोजर इस निर्माण कार्य को गिराने के लिए आ पहुंचे थे तब यहां के लोगों ने श्रृंखला बनाकर इसे टूटने से बचाया था और 1989 में अदालत ने जब फैसला नेकचंद के पक्ष में दिया तब से इसकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। यह पार्क चण्डीगढ़ के लिए अत्यंत गौरवशाली बात है जो कि यहां कि सुंदरता को चार चांद लगा देता है।

–मकान नं. 169, ट्रिब्यून कॉलोनी
जीरकपुर, चण्डीगढ़-160017 (पंजाब)

विवेचन

श्री किरीट भाईजी

परिवार का बदलता स्वरूप

बालक का परिचय पालना में होता है। उस पालना में, जो पालना में सोया हुआ है इसमें जैसे वह सोया है, जैसे वह बोलता है, रोता है मां को समझ आ जाता है कि बड़ा होकर क्या बनेगा। पुत्र की पहचान पालना में सोय हुए ही हो जाती है और पुत्रवधू घर में जब पहली बार जाती है और जैसे वह आती है तब सास को भी पता चल जाता है। यह घर में क्या करने वाली है।

हमारी भाषा बड़ी विचित्र है। पुत्र की पत्नी का नाम पुत्रवधू। सास-ससुर पुत्रवधू कहते हैं। पुत्र को पुत्र और जो बहु होती है उसे पुत्रवधू। आपने कभी सोचा कि ये शब्द कहां से आये और किसने दिये। पुत्र हो तो वह भी दु:ख देने वाला होता है, जब तक वह अकेला है तब तक वह अकेला दु:ख देगा और जब पत्नी आती है तो वह पत्नी रूप वधू दु:ख देती है।

पुत्र के भी कई प्रकार होते हैं- एक मानबंधु होता है, एक शत्रु पुत्र होता है, एक उदासीन पुत्र और एक सेवक पुत्र होता है। उदासीन पुत्र वह है जिसकी जब तक शादी नहीं होती तब तक माता-पिता का कहना मानता है, साथ में रहता है। लेकिन उदासीन पुत्र की जब शादी हो जाती है तो वह अपने माता-पिता से अलग हो जाता है। समझ लेना चाहिए कि यह उदासीन पुत्र है।

शत्रु-पुत्र! पिछले जन्म में किसी के साथ कुछ बेईमानी की, लड़ाई-झगड़ा किया तो वही दुश्मन घर जाता है। वह खूब कष्ट देता है और उसी को शत्रु-पुत्र कहते हैं। किसी की चोरी कर ली, किसी का पैसा पार्टनरशिप में खा गये, तो अगले जन्म में वही आयेगा और तुम्हारी तिजोरी साफ कर देगा। चौथा मेरे भाई-बहन यदि तुमने किसी की सेवा की, तो तुम्हारे घर ऐसे पुत्र आयेंगे। तुम्हारी सेवा करेंगे, अंतिम सांस तक तुम्हारी सेवा करेंगे। लेकिन यह तब होता जब तुमने किसी की सेवा की होती है। यदि तुमने किसी की सेवा नहीं की तो ऐसे पुत्र की अपेक्षा मत करो।

सेवा करने वाला पुत्र तब आता है, जब हम खुद किसी की सेवा करते हैं। सेवा करने से मानसिक वृत्ति साफ हो जाती है, किसी की भी सेवा करो, जिन लोगों ने कभी किसी की सेवा नहीं की, उसका मन भारी, चंचल होता है। मानसिक वृत्ति कभी शांत नहीं होती है। और जब तक किसी पुरुष, महापुरुष, किसी संत, किसी गुरु की सेवा न करो तब तक सूक्ष्म वासना का नाश नहीं होता।

वासना ही पुनर्जन्म का कारण होती है। वासना जब तक पूर्णत: खत्म नहीं होती, तब तक चौरासी लाख योनि में भटकते रहोगे। यह खत्म होती है किसी गुरु के द्वारा। किसी महापुरुष की, किसी संत की, कोई सेवा नहीं करता, सवाल पूछते हैं सेवा नहीं करते। अच्छे महात्मा, सच्चे महात्मा कहते नहीं कि हमारी सेवा करो। लेकिन

संत-महात्माओं की सेवा करने से अहंकार से मुक्ति मिलती है और जीवन में विनम्रता होती है। अहंकार से बचना हो तो सेवा करनी चाहिए। यह अपने कल्याण के लिए बहुत जरूरी है।

उपनिषद् में कुछ मार्ग बतलाये गये हैं। दो द्वादसी यानी बारह साल ब्रह्मचर्य रहना चाहिए। दो द्वादसी अर्थात 24 साल। इसके बाद द्वादसी गृहस्थाश्रम के लिए है। 24 साल के हों, तब शादी करना चाहिए। 24 और 24 अर्थात 48 साल तक गृहस्थाश्रम होता है। इसके बाद एक द्वादसी और आती है 48 से 60 तक, यह वानप्रस्थ काल है। वानप्रस्थ का मतलब हुआ संसार में रहो, परिवार में रहो लेकिन माथापच्ची मत करो। घर में जब बहू आए तो चाभी का गुच्छा उसे दे देना चाहिए। हमारा समय निकल गया अब अंतराल करना चाहिए। यदि वानप्रस्थ जीवन में तुमने नहीं किया, जब 60 की द्वादसी सन्निकट आयेगी तो तुम संन्यास प्राप्त नहीं कर सकोगे। तुम निर्वाह नहीं कर सकोगे, इसलिए 12 साल अभ्यास करने के लिए हैं। 48 साल की जब तुम्हारी उम्र हो जाये तो सब कुछ अपनी संतान को दे देना चाहिए और उसे कहो कि तुम संभालो। हम भगवान का भजन करेंगे। यदि घर में ही रहना है तो एक काम करें। बहू घर में आ जाये तो पति-पत्नी को (बूढ़े-बुढ़िया) एक झूला बनाकर बैठे रहना चाहिए और पुत्रवधू जब आसपास में आयें तो उसकी खूब प्रशंसा करनी चाहिए। बहू समझ जायेगी कि मेरे माता-पिता जैसी सराहना मिल रही है, उस दिन खाने में दो चम्मच ज्यादा घी मिलेगा। खूब प्रशंसा करें उसकी। जंगल में जाना तो संभव नहीं है भई। लेकिन कम से कम इतना तो करना चाहिए।

सेवा करने वाला पुत्र तब आता है, जब हम खुद किसी की सेवा करते हैं। सेवा करने से मानसिक वृत्ति साफ हो जाती है, किसी की भी सेवा करो, जिन लोगों ने कभी किसी की सेवा नहीं की, उसका मन भारी, चंचल होता है। मानसिक वृत्ति कभी शांत नहीं होती है। और जब तक किसी पुरुष, महापुरुष, किसी संत, किसी गुरु की सेवा न करो तब तक सूक्ष्म वासना का नाश नहीं होता।

सुरों में बसती असाधारण शक्ति

चाहे तानसेन के दीपक राग से रोशन होते दिये हो, पंछियों की रागनियों में अलमस्त होता वातावरण हो या फिर मां की मीठी लोरी के बीच सुख की नींद लेता बच्चा, संगीत का प्रभाव हर जगह स्पष्ट है। सात सुरों के आकर्षण से कोई भी अछूता नहीं रह सकता। इसीलिए भाषाओं की दुरियां पाटने वाली एक ही जुबान है जो दिलों को जोड़ सकती है, वह है संगीत।

संगीत मात्र मनोरंजन नहीं है। यह मनुष्य जीवन को सरस बनाने का एक महत्वपूर्ण साधन है। मानव की कोमल भावनाओं को तरंगित व झंकृत कर उसमें देवत्व का उदय करने में संगीत अपनी महत्ती भूमिका निभा सकता है। यदि उसे भावनाओं और प्रेरणाओं से अनुप्राणित किया जा सके तो इसका परिणाम न केवल गाने-सुनने वालों के लिए वरन् समूचे वातावरण को श्रेयस्कर परिस्थितियों से भरा-पूरा बनाने में सहायक हो सकता है। यदि संगीत का अस्तित्व न रहे तो दुनिया बड़ी कर्कश, रूखी व नीरस प्रतीत होने लगेगी। आपाधापी, कोलाहाल और रोजमर्रा की समस्याओं से घिरे संसार में यदि ईश्वर का कोई उत्तम वरदान मनुष्य को मिला है तो वह संगीत ही है। इससे पीड़ित हृदय को शांति और संतोष मिलता है। भाव-विभोर करने वाले गायन से मनुष्य की सृजन शक्ति का विकास होता है और उसे आत्मिक प्रफुल्लता मिलती है।

सामूहिक संगीत का अपना महत्व है, इस विषय पर अनुसंधानरत चिकित्साविदों का मत है कि जब कई व्यक्ति एक साथ गाते हैं तो सब लोगों का स्वर प्रवाह एवं आंतरिक उल्लास मिलकर एक ऐसी तरंग श्रृंखला उत्पन्न करता है जो वातावरण में मिलकर सबको आनंद विभोर कर देती है। कभी वर्षा ऋतु में भारत के गांव-गांव में 'मेघ मल्हार' राग गाया जाता था जो कठोरतम लक्ष्य में भी प्रेम और उल्लास-आनंद का झरना प्रस्फुटित प्रवाहित करने में सफल होता था।

आज भी फाल्गुन के महीने में फाग की धूम होती है या किसी विवाह समारोह में बैण्डबाजे बजते हैं तो बच्चे, बूढ़े सभी में उल्लास फूट पड़ता है। सामूहिक गायनों में चाहे वे भजन हो या ईश्वर के लिए की गई प्रार्थना, सभी को अपने प्रयत्न से अधिक ही लाभ मिलता है। परन्तु उन स्वर लहरियों से वातावरण में जो प्रकंपन पैदा होता है वह व्यापक क्षेत्र को प्रभावित करता है। जिससे प्रत्येक श्रोता चाहे वह गाने में भाग न भी ले रहा हो, उस आनंद सरोवर में डूब जाता है। संगीत का मनुष्य जीवन और आत्मा से सीधा संबंध है। आत्मा उसके बिना कुंठित हो जाती है। इसलिए आत्मिक प्रगति के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति को गाने, बजाने और संगीत सुनने का लाभ अवश्य लेना चाहिए।

छोटे-छोटे बच्चों को आपने देखा होगा वे टेपरिकार्डर में बज रहे किसी गाने पर, बैण्डबाजे पर या मोहल्ले में बज रहे किसी ढोल पर अनायास ही थिरकने लगते हैं जबकि वे संगीत को कुछ खास जानते भी नहीं है। बस संगीत की धुन पर उनके हाथ-पांव गति करने लगते हैं। वर्तमान में विज्ञान की तरह ही संगीत पर भी अनुसंधान चल रहा है और जो निष्कर्ष निकले हैं वह मनुष्य को इस बात की प्रेरणा देते हैं कि यदि मानवीय गुणों और आत्मिक आनंद को जीवित रखना है तो उसे अपने आपको संगीत से जोड़े रहना चाहिए। संगीत की तुलना प्रेम से की गई है। दोनों ही समान उत्पादक शक्तियां हैं। जड़ एवं चेतन तत्व दोनों पर ही इनका चमत्कारिक प्रभाव पड़ता है। संगीत से शरीर, मन और आत्मा तीनों को बलवान बनाने वाले तत्व परिपूर्ण मात्रा में विद्यमान है। इसी कारण भारतीय आचार्यों और मनीषियों ने संगीत शास्त्र पर सर्वाधिक जोर दिया है। भक्ति भावनाओं के विकास में भी संगीत का योगदान असाधारण है।

-विवेक जैन

सौभाग्यसूचक पक्षी नीलकंठ

सुश्री दोयल बोस

रंगों का अद्भुत संगमवाला नीलकंठ। कबूतर के आकारवाला बड़ा पक्षी होता है। इसका सिर कुछ बड़ा, चोंच भारी और छाती लाली लिये भूरी होती है। इसके पेट और पूंछ का निचला भाग हल्का नीला होता है। नीलकंठ के पंख हल्के नीले और गहरे नीले रंगों की चमकीली पट्टियां उसके पंखों पर दिखाई देती है। उसका गला स्लेटी रंग का होता है। जिस पर नीली धारियां पायी जाती हैं।

नीलकंठ मुख्य रूप से खेतिहर इलाकों में, घने जंगलों में, किसी पेड़ के ठूंठ पर या टेलीफोन के तारों पर बैठा हुआ देखा जा सकता है। इन जगहों से वह शिकार को पकड़कर फिर वहीं बैठ जाता है। यह झींगुर, टिड्डे, गुबरैले और अन्य कीड़े शौक से खाता है। नीलकंठ इन फसलनाशक कीड़ों का सफाया करके खेतों की बड़ी सेवा करता है। नीलकंठ की बोली तेज, कठोर और विभिन्न प्रकार की होती है। अपनी मादा को रिझाने के लिए नर नीलकंठ हवा में कलाबाजियां करते समय विशेष रूप से अधिक बोलता है। और, कई प्रकार का खेल खेलते हुए चीखता रहता है। इस समय इसका पंख खूब चमकता है। यह अपना घोंसला किसी पेड़ की कोटर में बनाता है, जिसमें खर-पतवार, पंख, पत्ते जमा होते हैं। मादा नीलकंठ एक बार में 4-5 अंडे देती है।

भारतीय परिवेश में हिन्दू धर्म के लोग नीलकंठ के दर्शन को शुभ मानते हैं। यात्रा के क्रम में इस पक्षी के दर्शन हो जायें तो लोग मानते हैं कि यह यात्रा शुभ और कल्याणप्रद होगी। उड़ते नीलकंठ को देखकर विद्यार्थीजन उनसे 'नीलकंठ आजा, बुद्धि दे जा' की कामना करते हुए अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हैं। नीलकंठ के जोड़े को देखने से माना जाता है कि वर्ष भर तक घर में सुख-संपन्नता बनी रहेगी। दुर्गा पूजा के अंतिम दिन विजयादशमी को नीलकंठ का दर्शन विशेष अर्थ रखता है। इस दिन लोग अपने घरों से दूर, खेतों में, जंगल के आस-पास, पेड़ों के झुरमुट के पास इस पक्षी को ढूंढते हुए देखे जाते हैं। इस पक्षी को इस दिन उड़ते हुए देखना और भी मंगलमय माना जाता है। कई लोग नीलकंठ को शिव का रूप मानकर प्रणाम करते हैं तथा संपूर्ण वर्ष के लिए सुख, समृद्धि, संपन्नता की कामना करते हैं।

विवाह के संस्कार और ईश्वर

अंशुमाली रस्तोगी

बचपन का दौर था। तब ईश्वर में हमारी प्रबल आस्था थी। उसे आस्था न कहकर आप 'डर' कहें तो ज्यादा ठीक रहेगा। यह डर परीक्षाओं के दौरान और रिजल्ट आने के वक्त ज्यादा हावी हो जाया करता था। हम ईश्वर से प्रार्थना किया करते थे कि वह हमें अच्छे नंबरों से पास करा दे।

हमारा ईश्वर कभी वह प्रार्थना सुन लेता था और कभी नहीं भी सुनता था। जब नहीं सुनता था तब उस पर बड़ा गुस्सा आता था। मन करता था अभी मंदिर जाकर उससे पूछूं कि मैं फेल कैसे हो गया, जबकि मैं तुम्हारे दरबार में हाजिरी लगाने नियमित रूप से आया करता था।

खैर हर सोच, हर विचार का अपना एक समय होता है। धीरे-धीरे उस सोच, उस आस्था से मैं पीछे हटता गया। ईश्वर और उसकी शक्ति पर कई ग्रंथ पढ़े। कुछ बातें जीवन के अनुभवों से समझीं। मिथकों से पीछे हटा। मैंने महसूस किया कि तब मैं उसके पीछे भाग रहा था, उसको सब कुछ मान रहा था, जिसको कभी देखा न था। जिसकी उत्पत्ति का कहीं कोई प्रमाण नहीं था।

एक पौराणिक मान्यता है कि यह पृथ्वी गाय के सींग या शेष नाग के फण पर टिकी हुई है। अब आप ही बताएं कि आज के युग में क्या यह बात मानने लायक है? दरसअल, इन तर्कहीन मिथकों को गढ़ने में बहुत बड़ा योगदान पुराने जमाने के पढ़े-लिखे और शिक्षित वर्ग का रहा है। वह योगदान अब भी बना हुआ है, क्योंकि हम उनके मिथकों का प्रतिवाद नहीं करते। आज भी हम विवाह को किसी ईश्वरीय अनुष्ठान की तरह संपन्न कराते हैं।

ईश्वर की शान में की जाने वाली तमाम बेवकूफियों में एक बेवकूफी विवाह भी शामिल है। कहते हैं कि विवाह ईश्वर संपन्न करवाता है। वही जोड़ियां बनाता है, वही तोड़ता भी है। विवाह से पहले लड़के और लड़की के ग्रह-नक्षत्रों का मिलान कराया जाता है, ताकि उनके वैवाहिक जीवन में किसी प्रकार की अड़चन न आने पाए। कभी किसी का कोई ग्रह भारी निकल आता है, तो किसी में मांगलिक दोष पाया जाता है। फिर शुरू होती है उनके दोष-निवारण की प्रक्रिया। हमने विवाह को रस्मों-रिवाजों व धार्मिक अनुष्ठानों में ढालकर उसे विचार और व्यवहार दोनों से काट दिया है। विवाह के बनने-बिगड़ने के पीछे किसी ग्रह-नक्षत्र या ईश्वर का हाथ नहीं, बल्कि स्त्री-पुरुष के बीच पनपने वाली वैचारिक सहमतियां-असहमतियां होती हैं। आप वैचारिक सहमति-असहमति को किसी ईश्वरीय अनुष्ठान से नहीं जीत सकते। विवाह का आयोजन सामाजिक है, उसकी सफलता-असफलता हमारे आपसी व्यवहार और समझदारी पर निर्भर करती है। क्या मंडप में कराए जाने वाले तमाम अनुष्ठानों के बावजूद हमारे समाज में शादियां नहीं टूटतीं? क्या बहू का दहेज के लिए उत्पीड़न नहीं होता?

दरअसल हम ईश्वर के मिथकों और अंध आस्थाओं में इस कदर उलझे-से गए हैं कि आगे का खुला रास्ता हमें दिखाई ही नहीं देता। यह 21वीं सदी है, लेकिन ईश्वर और धर्म के प्रति हमारी सोच हमें जबरन मध्यकाल में बनाए रखती है। हम पर ईश्वर का खौफ बना हुआ है। धर्म अपने कर्मकांडों के सहारे हम पर हावी है।

आधुनिक समाज का समझदार तबका इस पर कुछ नहीं बोलना चाहता, क्योंकि वह खुद भी ईश्वर की तीसरी आंख से डरता है। लेकिन ईश्वर प्राचीन काल में ठहरा हुआ तो नहीं होगा। अगर वह उस युग के ऋषियों-मुनियों को प्रेम करता था, तो आज के लोगों को भी प्यार करता होगा। यदि उस काल में उसे जानने, पाने और प्रसन्न करने के उपाय सोचे गए थे, तो इस काल में भी सोचे जा सकते हैं-नए चलन और नए साधनों के अनुरूप।

मां वह बात भी समझ लेती है, जो हम नहीं कहते

- मां को आप चाहे जो गिफ्ट दे दें, वह उस गिफ्ट से हमेशा छोटा ही होगा, जो गिफ्ट उसने आपको दिया है- जिंदगी का गिफ्ट।
- मां का प्यार ऐसा ईंधन है, जो साधारण इंसान को भी नामुमकिन काम करने की ताकत दे देता है।
- दुनिया के लिए आप महज एक शख्स हो सकते हैं, पर एक शख्स (मां) के लिए आप दुनिया हैं।
- एक फुलटाइम मां होना सबसे ज्यादा सैलरी वाली जॉब है क्योंकि इसके बदलें जो मेहनताना मिलता है, वह खालिस प्रेम है।
- ऐसा कोई महान शख्स नहीं हुआ, जिसकी मां महान न रही हो।
- जब आपकी मां पूछती है- तुम्हें सलाह चाहिए? तो यह सवाल महज दिखावा है। आप 'हां' कहिए या 'ना', सलाह तो आपको मिलनी ही है।
- मां उस बात को भी समझ लेती है, जो उसका बच्चा नहीं कहता।

- जो शख्स यह कहता है कि वह अतीत को मिस नहीं करता, निश्चित रूप से उसकी मां नहीं है।
- मां दुनिया की सबसे सहज फिलॉसफर होती है।
- लड़कियों को ऐसे मर्द से शादी नहीं करनी चाहिए जो अपनी मां से नफरत करता हो क्योंकि ऐसा शख्स अपनी बीवी से भी नफरत करेगा।
- जिस वक्त बच्चे का जन्म होता है, उस वक्त मां का भी जन्म होता है।
- पिता बच्चों के लिए जो सबसे बड़ा काम कर सकता है, वह ये कि वह उनकी मां को प्रेम करे।
- दुनिया में एक ही बच्चा सबसे खूबसूरत है और वह बच्चा हर मां के पास है।

-बेला गर्ग

चिंतन

आचार्य रत्नसुंदर सूरीश्वरजी

सांस्कृतिक प्रदूषण का बढ़ता प्रभाव

देश के स्कूलों में शुरू किया जाने वाला यौन–शिक्षण सभी प्रकार के शुभत्व को प्रदान करने वाले संस्कारों और भव्यतम संस्कृति को मटियामेट कर देने वाला एक भीषण षड्यंत्र है।

हमारी संस्कृति और हमारे संस्कार ही हैं कि यहां अपने ही शरीर और सत्व से जन्मी सगी बेटी के सामने आदमी कपड़े नहीं बदलता। यहां 10-12 साल की बेटी अपने सगे बाप के साथ नहीं सोती। यहां पर स्त्री मात्र मां बहन समान का सूत्र किशोरवय से ही काम में पड़ता रहता है। सनातन सत्य को बताते हुए संत तुलसीदास कहते हैं- 'पर स्त्री मात समान।'

हजारों वर्षों की प्राचीन संस्कृति और उसके संस्कार यही हैं, जो हमारे तन-मन को पावन करते हैं।

रक्षा-बंधन के दिन बहन अपने भाई के हाथ में राखी बांधकर उससे अपनी पवित्रता की रक्षा का वचन लेती है। घर के बड़े बुजुर्ग घर में प्रवेश करने से पहले खांसकर आवाज करते हैं और घर की औरतें उनके सम्मान में परदे में सिमट जाती हैं। शाम होते ही बेटी को घर लौटने में थोड़े देर हो जाये तो पूरी-पूरी रात जागते रहने वाले मां-बाप हर घर में हैं। हमारे यहां यह सामान्य सी बात है।

हमारी संस्कृति में यौन संबंधों की शिक्षा की न तो आवश्यकता है और न ही कोई स्थान। प्रकृति ने स्वयं ऐसी व्यवस्था बनाई हुई है कि समय आने पर, आयु के परिपक्व होने पर युवक-युवतियों को इसका सहज ज्ञान हो जाती है।

भारत के महानुभावों-विचारकों और चिंतकों से मेरा आग्रह है कि इस संदर्भ में विचार करें और देश में एक बौद्धिक आंदोलन की शुरुआत करें। हमारे यहां मां-बाप और उनकी संतानों के बीच एक मर्यादा होती है। यह शिक्षण उस मर्यादा को खत्म कर देगा।

यूरोप और अमेरिका की संस्कृति और संस्कार में मर्यादाओं का कोई अस्तित्व नहीं है। वहां की संस्कृति भौतिकता और भोगवाद की संस्कृति है। भारतीय संस्कृति और संस्कारों का आधार भौतिकता या भोगवाद नहीं है। यहां आत्मकल्याण और धार्मिक विचारधाराओं के अनुसार जीवन-यापन करने वाला मनुष्य अपनी अंतरात्मा को पवित्र बनाने के उद्देश्य से जीवन के दैनिक कार्यों को संपन्न करता है। धार्मिकता और नैतिकता के स्तंभ पर भारतीय समाज टिका हुआ है। आज इन्हीं आधारभूत स्तंभों को तहस-नहस कर देने वाली यौन-शिक्षा की इस संस्कृति-विनाशक योजना पर कार्य किया जा रहा है।

देश के स्कूलों में शुरू किया जाने वाला यौन-शिक्षण सभी प्रकार के शुभत्व को प्रदान करने वाले संस्कारों और भव्यतम संस्कृति को मटियामेट कर देने वाला एक भीषण षड्यंत्र है।

इस शिक्षा की हिमायत करने वालों से मैं इतना ही पूछना चाहूंगा कि इस देश की समाज व्यवस्था में इसकी जरूरत है क्या? इस देश की संस्कृति इस शिक्षा को आत्मसात कर सकेगी क्या?

बड़े-बुजुर्गों के पास मिलने वाले नैतिकता के संस्कार और इस यौन-शिक्षा में कोई मेल (तारताम्य) नहीं है। हमारी संकृति, हमारा धर्म इस प्रकार की शिक्षा की अनुमति देता है क्या? यदि ऐसा कुछ नहीं है तो फिर स्कूलों में यह शिक्षा शुरू करने की जरूरत क्या है?

हां! जरूरत है न! इस देश की भावी पीढ़ी को बेशर्म और नपुंसक बनाने के लिए इससे अच्छा उपाय और क्या हो सकता है? भावी पीढ़ी को तथाकथित श्रेष्ठता (या अधमता?) प्रदान करने के लिए इससे अच्छा कोई दूसरा उपाय नहीं है।

ब्रिटेन के स्कूलों में पिछले करीब पंद्रह साल से यह शिक्षा दी जा रही है। आज का ब्रिटेन इसका फल भुगत रहा है। परिणाम यह हुआ है कि वहां स्कूलों में गर्भपात केन्द्र खोलने पड़े, स्कूलों में नर्स की नियुक्ति करनी पड़ी। वहां के स्कूलों में सरकार को प्रति वर्ष करीब दस हजार लड़कियों का गर्भपात करवाना पड़ रहा है। प्रतिवर्ष इस संख्या में बेतहाशा वृद्धि हो रही है और इसे रोक पाना वहां की सरकार के लिए अच्छा खासा सिरदर्द बना हुआ है। आज वहां मात्र 11 साल के लड़के-लड़कियां एक दूसरे से कंडोम का आदान प्रदान कर रहे हैं।

जिस देश की संस्कृति (या कुसंस्कृति) में यौन संबंध सहज सामान्य रूप से स्वीकार्य हैं, वहां के विद्यालयों में दी जाने वाली इस यौन शिक्षा ने यह हाहाकार मचा रखा है। हमारे इस देश में तो सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक और धार्मिक, किसी भी रूप में यौन-प्रदर्शन स्वीकार्य नहीं है। यहां इस शिक्षा की हिमायत कर देश के स्कूलों में इसे आरंभ कर दिया गया तो यह शिक्षा (?) कितने बड़े विनाश का सर्जन करेगी, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

शील, सदाचार, संस्कृति, मर्यादा और धर्मप्रेमी माताओं-पिताओं। बुद्धिजीवियों और युवाओं! उठो, जागो और हमारी संस्कारशालाओं में प्रवेश कर रहे इस विनाश को रोकने के लिए संकल्पशील बनो।

यदि आज सोते रहे तो हमारा कल, हमारा भविष्य अंधकारमय होगा।

स्वाद-विजय का प्रयोग

आचार्य महाश्रमण

अध्यात्म-साधना का केन्द्रीय तत्त्व है अनासक्ति। जिस व्यक्ति में अनासक्ति का जितना विकास होता है, वह उतना ही आध्यात्मिक बन जाता है। यदि आसक्ति क्षीण हो जाती है तो फिर क्रोध, मान और माया टिक नहीं सकते। आसक्ति का संबंध लोभ कषाय से है। अध्यात्म के बाधक तत्त्वों का प्रतिनिधित्व करने वाला एक शब्द है कषाय। उसे दो शब्दों के द्वारा अभिव्यक्ति दी जाए तो वे होंगे-राग और द्वेष। उसे चार शब्दों में विश्लेषित किया जाए तो वे होंगे-क्रोध, मान, माया और लोभ। इनमें प्रधान लोभ है। यह दसवें गुणस्थान तक बना रहता है। क्रोध, मान और माया नवें गुणस्थान में ही सर्वथा उपशांत या क्षीण हो जाते हैं। इसका निष्कर्ष यह है कि लोभ सबसे अधिक दुर्जय है। मोहनीय कर्म को आठ कर्मों में राजा कहा जाता है। इसी प्रकार मोहनीय कर्म की विभिन्न कृतियों में लोभ को राजा कहा जा सकता है। उसे मोह-परिवार का मुखिया भी कहा जा सकता है। क्रोध और मान द्वेष के तथा माया और लोभ-राग के अंगभूत हैं। द्वेष राग का उपजीवी होता है। राग के बिना वह हो ही नहीं सकता। इसलिए रागविजय पर अधिक ध्यान केन्द्रित करना अपेक्षित होता है।

राग-विजय और आसक्ति-विजय के अनेक प्रकार हैं। जितने आसक्ति के प्रकार हैं, उतने ही आसक्ति-विजय के प्रकार हैं। संक्षेप में, आसक्ति के पांच प्रकार हैं-शब्द आसक्ति, रूप आसक्ति, गंध-आसक्ति, रस-आसक्ति और स्पर्श-आसक्ति। इन्द्रिय विषयों का सर्वथा अप्रयोग संभव नहीं है। किन्तु उनमें आसक्ति का न होना साधक का लक्ष्य होता है।

आसक्ति-विजय के विभिन्न प्रयोगों में एक है रस-परित्याग। निर्जरा के बारह भेदों में इसका चौथा स्थान है। यह एक स्वाद-विजय का प्रयोग है। इसमें उन खाद्य-वस्तुओं का परिवर्जन किया जाता है, जो स्वादिष्ट होती हैं, जिह्वा को तृप्ति प्रदान करने वाली होती हैं। इसके अनेक प्रकार हैं। जैसे-

आयंबिल-दिन में एक समय, एक बार, केवल एक धान्य के अतिरिक्त कुछ नहीं खाना। उसमें नमक, मसाले, घी आदि कुछ भी नहीं होना चाहिए।

निर्विगय-दिन में एक समय, एक बार से अधिक भोजन नहीं करना। भोजन में दूध, दही, आदि सभी विकृतियों (गरिष्ठ पदार्थों) का परिहार करना। छाछ, रोटी, चने जैसे पदार्थों के अतिरिक्त सरस पदार्थों को सेवन नहीं करना। लवण-वर्जन-नमक और नमक-युक्त भोजन का परिवर्जन करना। ओवाइय में इस परित्याग के नौ प्रकार भी उपलब्ध हैं।

अध्यात्म-जगत का मौलिक तत्त्व है इन्द्रियविजय। उसका एक प्रकार है-स्वाद-विजय अथवा रसनेन्द्रिय-संयम। उसकी उपलिब्धि के लिए रस-परित्याग का प्रयोग एक सशक्त साधन है। रसों का परित्याग कर रुक्ष और सादे भोजन के सेवन से अस्वाद का अभ्यास परिपक्व होता है।

अधिक मात्रा में रस-सेवन से उन्माद बढ़ता है, विकास बढ़ता है, आलस्य बढ़ता है, स्वाध्याय आदि में अवरोध उत्पन्न होता है। इनसे बचने के लिए भी रस-परित्याग अपेक्षित है। रस-परित्याग एक साधन है। उसका साध्य है-रसगत आसक्ति का त्याग। रस-परित्याग तक सीमित न रहकर (आसक्ति)-त्याग के रूप में परिणत हो, यह हमारा लक्ष्य होना चाहिए। यदि पदार्थपरक आसक्ति न टूटे तो केवल पदार्थ का त्याग मेरी विनम्र विचारणा के अनुसार द्रव्य रस-परित्याग है। आसक्ति छूटने पर वह 'भाव रस-परित्याग' कहलाएगा।

इन्द्रिय-विषयों का भोग छोड़ देने वाले व्यक्ति के विषय निवृत्त हो जाते हैं। किन्तु रस (आसक्ति) नहीं। तद्गत आसक्ति तब छूटती है, जब परम की अनुभूति प्राप्त होती है। रस-परित्याग का प्रयोग साधना और स्वास्थ्य, दोनों दृष्टियों से उपयोगी हो सकता है।

भरोसा करें, वरना जिंदगी हो जाती है दुश्वार

एंटन चेखव

एंटन चेखव का नाम दुनिया के बेहतरीन कथाकारों में शुमार है। पेशे से डॉक्टर चेखव को खासतौर पर लघु कथाओं के लिए जाना जाता है। उनका जन्म 29 जनवरी 1860 को रूस में हुआ। शुरुआत में उन्होंने पैसे के लिए लिखना शुरू किया। 1879 में उनका दाखिला मेडिकल में हो गया। बाद में मेडिकल प्रैक्टिस के साथ-साथ उनका लिखना भी जारी रहा। उन्होंने द सीगल, थ्री सिस्टर्स, द स्टीप जैसी रचनाएं दीं। 15 जुलाई 1904 को 44 साल की उम्र में जर्मनी में टीबी से उनका देहांत हो गया।

- इस्तेमाल न किया जाए तो ज्ञान का कोई फायदा नहीं है।
- अच्छी परवरिश यह नहीं है कि आप टेबल पर सॉस न गिराएं, बल्कि यह है किसी दूसरे के गिराने पर आप उस पर ध्यान न दें।
- डॉक्टर और वकील एक जैसे ही होते हैं। दोनों ही आपको लूटते हैं। फर्क यह है कि डॉक्टर लूटने के साथ आपकी जान भी ले सकते हैं।
- हमें यह सीखना चाहिए कि हम बिना पत्तों के पेड़ों की भी तारीफ कर सकें और उन पर लगने वाले फलों का इंतजार कर सकें।
- विश्वास अंदर से आता है। दरअसल, यह एक जन्मजात काबिलियत है।
- प्यार, दोस्ती और इज्जत लोगों को उस तरह नहीं एकजुट कर सकते, जिस तरह किसी चीज के लिए नफरत।
- शराब की तरह दौलत भी लोगों को सनकी बना देती है।
- जो समझ न आए, उसे समझने का ढोंग नहीं करना चाहिए क्योंकि सिर्फ मूर्ख और कपटी ही सब कुछ जानते हैं और समझते कुछ नहीं है।
- जो जितना ज्यादा परिष्कृत होगा, वह उतना ही दुखी होगा। आग या डाकुओं से नहीं, दुनिया नफरत, दुश्मनी और छोटे झगड़ों की वजह से बर्बाद हुई है।
- कला में टैलेंट के अलावा कुछ भी नया नहीं है।
- जिंदगी में सकारात्मक चीजों से नहीं, नकारात्मक चीजों से भी सीखा जाता है।

डॉ. मृदुला जैन

महापर्व है क्षमापना पर्व

भारत त्योहारों का देश है। प्रत्येक दिन कोई न कोई त्योहार देश के किसी न किसी प्रांत में अवश्य मनाया जाता है। त्योहार जहां समाज में उल्लास, स्फूर्ति, प्रेम और सौहार्द का संचार करते हैं वहीं वचन शुद्धि और आत्मिक शुद्धि भी प्रदान करते हैं। जैन संस्कृति के अंतर्गत अधिकतर त्योहार अलौकिक पर्व के रूप में मनाये जाते हैं। इन पर्वों में 'क्षमापना दिवस' को महापर्व की संज्ञा दी जाती हैं। इसे 'संवत्सरी' भी कहते हैं।

यह पर्व वर्षा ऋतु के चातुर्मास में पर्युषण पर्व के आठवें दिन मनाया जाता है। पर्युषण शब्द दो अक्षरों के मेल से बना है। परि+उषण। 'परि' का अर्थ चारों ओर तथा 'उषण' का अर्थ- निवास है। आत्मा के पास निवास ही पर्युषण है। इसे प्राकृत भाषा में पज्जूसण कहा गया है। साधारण शब्दों में कहें तो चारों ओर से चित्त वृत्तियों को रोककर उन्हें आत्मनिरीक्षण के लिए केन्द्रित कर देना ही पर्युषण है। इसी प्रक्रिया के अंतर्गत क्षमापना पर्व आता है। इस दिन वर्षभर में होने वाली भूलों, अपराधों, दुष्कृत्यों और चारित्र की चादर पर पड़े दोषों के चिह्नों को मिटाने के लिए अरिहन्त और सिद्ध परमात्मा की साक्षी में माफी मांगी जाती है। भगवान महावीर ने उत्तराध्ययन सूत्र में कहा है- ''बुद्धिमान मानव की बुद्धि का तत्व इसी में है कि वह किसी को हानि न पहुंचाएं सबको समान भाव से माने, यही अहिंसा है और अहिंसा ही सर्वोच्च क्षमापना है।'' क्षमा और क्षमापना में भावों का भेद है। 'क्षमा' मात्र अपने अपराधों के लिए पश्चाताप पूर्वक मांगी जाती है जबकि 'क्षमापना' दूसरों के द्वारा दिए गए कष्टों को सहन कर उन्हें उदारतापूर्वक क्षमा कर देना और धीरता रखना भी होता है।

अब प्रश्न उठता है कि क्षमापना किसलिए? कई लोग क्षमा मांगना या क्षमा देना कायरता मानते हैं। यह उनका भ्रम है क्योंकि क्षमा तो वीरों का भूषण होती है। महावीर का कथन है- क्षमा मांगनी चाहिए, क्षमा देनी चाहिए, क्योंकि जो क्षमायाचना करके कषायों का उपशम कर लेता है, वह ही आराधक है। श्रमण संस्कृति का सार ही 'उपशम' है। अर्थात् जैन धर्म की स्थापना का आधार ही क्षमा है। क्षमा का उत्कृष्ट रूप यही है कि बदला लेने की शक्ति होते हुए भी अपराधी को क्षमा कर दिया जाए। शास्त्रों में कहा है-

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमन्तु में।
मित्ती में सव्व भूएसु, वेरं मज्झ न केणई॥

गुरु वल्लभ के अनुसार क्षमापना दिवस साल भर के जीवन व्यवहारों का लेखा-जोखा करके आंकड़ा मिलाने का दिन है। जैसे व्यापारी साल के अंत में अपने व्यापार के आय-व्यय का हिसाब किताब व्यवस्थित करता है। उसी प्रकार क्षमापना दिवस भी आत्म साधक रूपी व्यापारी के लिए आत्मगुणों की आय-व्यय की जांच का दिन है। दूसरे शब्दों में कहें आत्मा की यह सालगिरह या वर्षगांठ है, वार्षिकी है।

> **महावीर का कथन है- क्षमा मांगनी चाहिए, क्षमा देनी चाहिए, क्योंकि जो क्षमायाचना करके कषायों का उपशम कर लेता है, वह ही आराधक है। श्रमण संस्कृति का सार ही 'उपशम' है। अर्थात् जैन धर्म की स्थापना का आधार ही क्षमा है। क्षमा का उत्कृष्ट रूप यही है कि बदला लेने की शक्ति होते हुए भी अपराधी को क्षमा कर दिया जाए।**

जहां अनेक प्राचीन सभ्यताओं, रीति-रिवाजों, भाषाओं आदि का संसार से लोप हो रहा है वहीं प्रेम और मैत्री का संदेश वाहक होने के कारण क्षमापना दिवस को जैन समाज अत्यंत श्रद्धा और उल्लास से मनाता है। आज के संदर्भ में अतीव आवश्यकता है कि इस पर्व को साम्प्रदायिक चारदिवारी से बाहर जन-जन तक पहुंचाया जाए। वर्तमान युग में जब मानव 'गुस्से का व्याकरण' बनता जा रहा है। मानवीय भावनाएं खोखली होती जा रही हैं। अपनों से दूर हम सब अपने-अपने दायरों में कैद होकर अकेलेपन का अभिशाप झेल रहे हैं। पाश्चात्य सभ्यता की ओर उन्मुख होकर वेलेन्टाइन डे, हग डे, रोज डे आदि पूरे जोश से मनाते हैं। इसलिए आज जरूरत है इस पर्व की प्रासंगिकता को पहचानते हुए अपनी सभ्यता, संस्कृति की ओर उन्मुख होने का प्रयास करें। इसके लिए हमें कुछ खर्च भी नहीं करना। बस पूरे दिल से, मन से दो हाथ जोड़ने हैं। यकीन मानो दो हाथ जोड़ने से केवल हाथ नहीं जुड़ते अपितु दो दिल भी जुड़ जाते हैं। दुश्मन दोस्त बन जाते हैं। हृदय में पड़े अवसाद घुल जाते हैं। मन की गांठें खुल जाती हैं। तत्पश्चात परिवार, समाज, देश अपने बन जाते हैं। बस जरूरत है 'एक' कदम आगे बढ़ाने का, तो आयें इस 'क्षमापना दिवस' पर हम सब एक दूसरे से बिना किसी मतभेद के पूरे मन से क्षमा मांग लें, क्षमा कर दें। किसी ने कहा है-

इक न इक शम्मा अंधेरे में जलाए रखिए।
सुबह होने की है, माहौल बनाए रखिए॥

-शक्ति नगर, व्यास मार्ग,
दिल्ली-110007

शास्त्रोक्ति

डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल'

कर्मयोग एवं संन्यास

भगवद्गीता के पंचम अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण ने कर्मयोग एवं संन्यास का सूक्ष्म विवेचन किया है। वे स्पष्ट कहते हैं कि कर्मयोग और संन्यास दोनों ही परम कल्याणकारी हैं। वस्तुतः संन्यास ज्ञानयोग-सांख्य दर्शन का विषय है और कर्मयोग वेदांत का सार है। दोनों ही से परमधाम की प्राप्ति संभव होती है। किन्तु किसी संन्यासी के लिए, निष्काम कर्मयोग का सहारा लिए बिना किये गये समस्त कर्मों में कर्तापन का त्याग-अहं का पूर्ण विसर्जन कठिन होता है। जबकि निष्काम कर्मयोगी भव को ही भगवान समझने- समस्त प्राणियों में परमात्मा के दर्शन करने के कारण अपने सभी कर्म परमात्मा के लिए करता है, अपने लिए नहीं और इस प्रकार सहज ही कर्तापन का त्याग करने, अहं का विसर्जन करने में सफल हो जाता है।

इतना ही नहीं वह कर्म करता हुआ भी लिपायमान नहीं होता। कर्म-फल के बंधन में नहीं बंधता क्योंकि वह अपने सभी कर्म अपने लिए नहीं ईश्वर के लिए करता है। गीता में 'कुर्वन्नपि न लिप्यते' का यही भाव है। इससे स्पष्ट है कि हर निष्काम कर्मयोगी संन्यासी होता है परन्तु हर संन्यासी निष्काम कर्मयोगी नहीं होता।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर संन्यासी और निष्काम कर्मयोगी में निम्नांकित बातों में समानता और भिन्नता होती है। समानता के बिन्दु निम्नांकित हैं-

- दोनों ही संन्यासी होते हैं।
- दोनों ही संसार माया के आकर्षणों से विरक्त हो परमात्मा में अनुरक्त होते हैं।
- दोनों ही अपनी इंद्रियों और मन को अपने वशीभूत करने में सफल होते हैं।
- दोनों आत्मा को परमात्मा का ही रूप समझते हैं। आत्मा परमात्मा की अभिन्नता स्वीकार करते हैं।

लेकिन दोनों में निम्नांकित भिन्नताएं हैं-

- संन्यासी संसार को मिथ्या, माया या सपना समझता है। इसी से वह संसार से पलायन कर वन में निवास करता है। एकांतवास करते हुए वह योग साधना से विरक्त हो परमात्मा में अनुरक्त होता है। जबकि निष्काम कर्मयोगी संसार को परमात्मा का सगुण रूप समझता है। सारे संसार में परमात्मा के दर्शन करता है। वह संसार से पलायन नहीं करता वरन संसार में रहते हुए परमार्थ में संलग्न होता है।
- संन्यासी सांसारिक बंधनों से मुक्ति चाहता है। उसका अभीष्ट मोक्ष है। उसे केवल अपने कल्याण की चिन्ता रहती है। जबकि निष्काम कर्मयोगी सारे संसार को सियाराममय समझकर इसके दीन-दुखियों की सेवा को ही परमात्मा की सेवा, पूजा या भक्ति मानता है। वह मोक्ष न चाहकर जन्म-जन्मान्तर तक यही काम अर्थात परमात्मा की भक्ति करते रहना चाहता है।
- संन्यासी को अपने कर्मों के फल का त्याग करने कर्तापन या अहंभाव का त्याग करने में कठिनाई होती है क्योंकि वह अपने कर्म परमात्मा को समर्पित नहीं करता। जबकि निष्काम कर्मयोगी सहज भाव से अपने सभी कर्म परमात्मा को समर्पित करते हुए उन्हें संपन्न करता है। अतः उसका कर्म-फल का त्याग कर्तापन या अहंभाव का त्याग स्वयमेव हो जाता है।
- संन्यासी मरणोपरान्त मोक्ष की प्राप्ति करता है। जबकि कर्मयोगी अपने जीवनकाल में ही मुक्त-जीवनमुक्त रहता है। क्योंकि उसके समस्त कर्म ईश्वर को समर्पित रहते हैं। इसलिए वह कर्म-फल के चक्र में नहीं फंसता।
- संन्यासी के लिए अभिमानहीन होना आवश्यक नहीं किन्तु कर्मयोगी सदा ही अभिमानहीन होता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कर्मयोगी व्यक्ति संन्यासी से श्रेष्ठ होता है।

-1436, सरस्वती कॉलोनी, चेरीताल वार्ड
जबलपुर-482002 (म.प्र.)

कर्मयोग और संन्यास दोनों ही परम कल्याणकारी हैं। वस्तुतः संन्यास ज्ञानयोग–सांख्य दर्शन का विषय है और कर्मयोग वेदांत का सार है। दोनों ही से परमधाम की प्राप्ति संभव होती है। किन्तु किसी संन्यासी के लिए, निष्काम कर्मयोग का सहारा लिए बिना किये गये समस्त कर्मों में कर्तापन का त्याग–अहं का पूर्ण विसर्जन कठिन होता है।

शास्त्रोक्ति

नीच मनुष्य विघ्नों के भय से कार्य आरंभ नहीं करते, मध्यम कोटि के लोग प्रारंभ करने के बाद विघ्न आने पर रुक जाते हैं, किंतु उत्तम कोटि के मनुष्य विघ्नों के बार–बार आने पर भी एक बार प्रारंभ किये गये काम को नहीं छोड़ते।

–भर्तृहरि

अशोक जैन 'सहजानंद'

रत्नों का रहस्यमय संसार

पौराणिक मत है कि दैत्यराज बलि का वध करने के लिए भगवान त्रिलोकीनाथ ने वामन अवतार धारण किया और उसके गर्व को चूर किया। इस समय भगवान के चरण स्पर्श से दैत्यराज बलि का सारा शरीर रत्नों का बन गया, तब देवराज इन्द्र ने उस पर वज्र की चोट की, इस प्रकार टूटकर बिखरे हुए बलि के रत्नमय खंडों को भगवान शिव ने अपने त्रिशूल में धारण कर लिया और उसमें नवग्रह और बारह राशियों के प्रभुत्व का आधार करके पृथ्वी पर गिरा दिया। पृथ्वी पर गिराये गये इन खंडों से ही विभिन्न रत्नों की खानें पृथ्वी के गर्भ में बन गयीं।

रत्नों की उत्पत्ति

रत्नों की उत्पत्ति के विषय में एक अन्य कथा भी ग्रंथों में आती है। देवता और दैत्यों ने समुद्र मंथन किया तो 14 रत्न पदार्थ निकले। उसमें लक्ष्मी, उच्चैश्रवा, ऐरावत आदि के कौस्तुभ मणि को प्रभु ने अपने कंठ में धारण कर लिया। इससे निकले अमृत को लेकर देव और दानवों में संघर्ष हुआ। अमृत का स्वर्ण कलश असुरराज लेकर भाग खड़े हुए। कहते हैं कि इस छीना–झपटी में अमृत की कुछ बूंदें जहां–जहां गिरीं वहां सूर्य की किरणों द्वारा सूखकर वे अमृतकण प्रकृति की रज में मिश्रित होकर विविध प्रकार के रत्नों में परिवर्तित हो गए।

प्रमुख मणि–रत्न

रत्न चौरासी माने गये हैं। नौ प्रमुख रत्न तथा शेष उपरत्न माने जाते हैं। इन नौ प्रमुख रत्नों का नवग्रहों से संबंध माना जाता है।

सूर्य–माणिक्य, चंद्रमा–मोती, मंगल–मूंगा, बुध–पन्ना, बृहस्पति–पुखराज, शुक्र–हीरा, शनि–नीलम, राहु–गोमेद, केतु–लहसुनिया।

पुराणों में कुछ ऐसे मणि रत्नों का वर्णन भी पाया जाता है जो पृथ्वी पर नहीं पाये जाते। जैसे- चिंतामणि, कौस्तुभ मणि, रुद्र मणि स्यमंतक मणि।

ऐसा माना जाता है कि चिंतामणि को स्वयं ब्रह्माजी धारण करते हैं। कौस्तुभ मणि को नारायण धारण करते हैं। रुद्रमणि को भगवान शंकर धारण करते हैं। स्यमंतक मणि को इंद्रदेव धारण करते हैं। पाताल लोक भी मणियों की आभा से हर समय प्रकाशित रहता है। इन सब मणियों पर सर्पराज वासुकी का अधिकार रहता है। प्रमुख मणियां 9 मानी जाती हैं, घृत मणि, तैल मणि, भीष्मक मणि, उपलक मणि, स्फटिक मणि, पारस मणि, उलूक मणि, लाजावर्त मणि, मासर मणि।

इन मणियों के संबंध में कई बातें प्रचलित हैं। घृतमणि की माला धारण कराने से बच्चों को नजर से बचाया जाता है। इस मणि को धारण करने से कभी भी लक्ष्मी नहीं रूठतीं। तैल मणि को धारण करने से बल-पौरुष की वृद्धि होती है। भीष्मक मणि धनधान्य वृद्धि में सहायक है। उपलक मणि को धारण करनेवाला व्यक्ति भक्ति व योग को प्राप्त करता है। उलूक मणि को धारण करने से नेत्र रोग दूर हो जाते हैं। लाजावर्त मणि को धारण करने से बुद्धि में वृद्धि होती है। मासर मणि को धारण करने से पानी और अग्नि का प्रभाव कम होता है।

जन्म-तारीख के अनुसार रत्नों का चुनाव

15 अप्रैल से 14 मई	मेष	मूंगा
15 मई से 14 जून	वृषभ	हीरा
15 जून से 14 जुलाई	मिथुन	पन्ना
15 जुलाई से 14 अगस्त	कर्क	मोती
15 अगस्त से 14 सितम्बर	सिंह	माणिक्य
15 सितम्बर से 14 अक्टूबर	कन्या	पन्ना
15 अक्टूबर से 14 नवम्बर	तुला	हीरा
15 नवम्बर से 14 दिसम्बर	वृश्चिक	मूंगा
15 दिसम्बर से 14 जनवरी	धनु	पीला पुखराज
15 जनवरी से 14 फरवरी	मकर	नीलम
15 फरवरी से 14 मार्च	कुम्भ	गोमेद
15 मार्च से 14 अप्रैल	मीन	लहसुनिया

चुनाव कैसे करें?

अनिष्ट ग्रहों के प्रभाव को कम करने के लिए या जिस ग्रह का प्रभाव कम पड़ रहा हो उसमें वृद्धि करने के लिए उस ग्रह के रत्न को धारण करने का परामर्श ज्योतिषी देते हैं। एक साथ कौन-कौन से रत्न पहनने चाहिए और कौन-कौन से रत्न नहीं पहनने चाहिए। इस बारे में ज्योतिषियों की राय है कि,

माणिक्य के साथ–नीलम, गोमेद, लहसुनिया वर्जित हैं।
मोती के साथ–हीरा, पन्ना, नीलम, गोमेद, लहसुनिया वर्जित हैं।
मूंगा के साथ–पन्ना, हीरा, गोमेद, लहसुनिया वर्जित हैं।
पन्ना के साथ–मूंगा, मोती वर्जित हैं।
पुखराज के साथ–हीरा, नीलम, गोमेद वर्जित हैं।
हीरे के साथ–माणिक्य, मोती, मूंगा, पुखराज वर्जित हैं।
नीलम के साथ–माणिक्य, मोती, पुखराज वर्जित हैं।
गोमेद के साथ–माणिक्य, मूंगा, पुखराज वर्जित हैं।

लहसुनिया के साथ–माणिक्य, मूंगा, पुखराज, मोती वर्जित हैं।

सूर्य को शक्तिशाली बनाने में माणिक्य का परामर्श दिया जाता है। 3 रत्ती के माणिक को स्वर्ण की अंगूठी में, अनामिका अंगुली में रविवार के दिन पुष्ययोग में धारण करना चाहिए।

चंद्र को मोती पहनने से शक्तिशाली बनाया जा सकता है जो 2, 4 या 6 रत्ती का चांदी की अंगूठी में शुक्ल-पक्ष सोमवार रोहिणी नक्षत्र में धारण करना चाहिए।

मंगल को शक्तिशाली बनाने के लिए मूंगे को सोने की अंगूठी में 5 रत्ती से बड़ा मंगलवार को अनुराधा नक्षत्र में सूर्योदय से 1 घंटे बाद तक के समय में पहनना चाहिए।

बुध ग्रह का प्रधान रत्न पन्ना होता है। जो अधिकांश रूप में पांच रंगों में पाया जाता है, हलके हरे पानी के रंग जैसा, तोते के पंखों के समान रंगवाला, सिरस के फूल के रंग के समान, सेडुल फूल के समान रंगवाला, मयूर पंख के समान रंगवाला।

इसमें अंतिम मयूर पंख के समान रंगवाला श्रेष्ठ माना गया है। किन्तु यह चमकीला और पारदर्शी होना चाहिए। कम-से-कम 6 रत्ती वजन का पन्ना सबसे छोटी अंगुली में प्लेटिनम या सोने की अंगूठी में बुधवार को प्रात:काल उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में धारण करना चाहिए।

गुरु (बृहस्पति) के लिए पुखराज 5, 6, 9 या 11 रत्ती का सोने की अंगूठी में तर्जनी अंगुली में गुरु-पुष्य योग में सायं समय धारण करने का परामर्श ग्रंथों में उपलब्ध होता है।

शुक्र ग्रह को शक्तिशाली बनाने के लिए हीरा (कम-से-कम 2 कैरेट का) मृगशिरा नक्षत्र में बीच की अंगुली में धारण करना चाहिए।

शनि ग्रह की शांति के लिए नीलम 3, 6, 7 या 10 रत्ती का मध्यमा अंगुली में शनिवार को श्रवण नक्षत्र में पंचधातु की अंगूठी में धारण करना चाहिए।

राहु के लिए 6 रत्ती का गोमेद उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में बुधवार या शनिवार को धारण करना चाहिए। इसे पंचधातु में तथा मध्यमा अंगुली में पहनना चाहिए।

केतु के लिए 6 रत्ती का लहसुनिया गुरु पुष्य योग में गुरुवार के दिन सूर्योदय से पूर्व धारण करना चाहिए। इसे भी पंचधातु में तथा मध्यमा में पहनना चाहिए।

रत्नों के औषधीय उपचार

हजारों वर्षों से वैद्य रत्नों की भस्म और हकीम रत्नों की षिष्टि प्रयोग में ला रहे हैं। माणिक्य भस्म शरीर में उष्णता और जलन दूर करती है। यह रक्तवर्धक और वायुनाशक है। उदर शूल, चक्षु रोग और कोष्ठबद्धता में भी इसका प्रयोग होता है और इसकी भस्म नपुंसकता को नष्ट करती है। कैलशियम की कमी के कारण उत्पन्न रोगों में मोती बहुत लाभकारी सिद्ध होता है। मुक्ता भस्म से क्षय रोग, पुराना ज्वर, खांसी, श्वास-कष्ट, रक्तचाप, हृदय रोग में लाभ मिलता है।

मूंगे को केवड़े में घिसकर गर्भवती के पेट पर लगाने से गिरता हुआ गर्भ रुक जाता है। मूंगे को गुलाब जल में बारीक पीसकर छाया में सुखाकर

जन्मों के अनुसार रत्नों का चुनाव

जन्म तारीख	स्वामी ग्रह	उपयुक्त रत्न
1, 10, 19, 28	सूर्य	माणिक्य
2, 11, 20, 29	चंद्रमा	मोती
3, 12, 21, 30	बृहस्पति	पीला पुखराज
4, 13, 22, 31	यूरेनस	गोमेद
5, 14, 23	बुध	पन्ना
6, 15, 24	शुक्र	हीरा
7, 16, 25	नेपच्यून	लहसुनिया
8, 17, 26	शनि	नीलम
9, 18, 27	मंगल	मूंगा

शहद के साथ सेवन करने से शरीर पुष्ट बनता है। खांसी, अग्निमांद्य, पांडुरोग की उत्कृष्ट औषधि है।

पन्ना गुलाब जल या केवड़े के जल में घोटकर उपयोग में आता है। यह मूत्र रोग, रक्त व्याधि और हृदय रोग में लाभदायक है। पन्ने की भस्म ठंडी मेदवर्धक है, भूख बढ़ाती है, दमा, मिचली, वमन, अजीर्ण, बवासीर, पांडु रोग में लाभदायक है।

श्वेत पुखराज को गुलाबजल या केवड़े में 25 दिन तक घोटा जाए और जब यह काजल की तरह पिस जाए तो इसे छाया में सुखा लें। यह पीलिया, आमवात, खांसी, श्वास कष्ट, बवासीर आदि रोगों में लाभकारी सिद्ध होता है। श्वेत पुखराज की भस्म विष और विषाक्त कीटाणुओं की क्रिया को नष्ट करती है। हीरे की भस्म से क्षयरोग, जलोदर, मधुमेह, भगंदर, रक्ताल्पता, सूजन आदि रोग दूर होते हैं। हीरे में वीर्य बढ़ाने की शक्ति है। पांडु, जलोदर, नपुंसकता रोगों में विशेष लाभकारी सिद्ध होती है।

रसराज समुच्चय के अनुसार हीरे में विशेष गुण यह है कि रोगी यदि जीवन की अंतिम सांसें ले रहा हो, ऐसी अवस्था में हीरे की भस्म की एक खुराक से चैतन्यता आ जाती है।

–अरिहंत इंटरनेशनल
239, गली कुंजस, दरीबा, दिल्ली-6

शास्त्रोक्ति

मदिरा तत्काल धन की हानि करती है, कलह को बढ़ाती है, रोगों का घर है, अपयश की जननी है, लज्जा का नाश करती है और बुद्धि को दुर्बल बनाती है।

–दीघनिकाय

भविष्य

आर. जे. मौर्य

बच्चे तो एक आइना हैं

बहुत से लोग अपने बच्चों को दोष देते रहते हैं कि वह कुछ सुनता ही नहीं, अपने मन की करता है, परन्तु अपने गिरहबान में नहीं झांकते कि वे स्वयं कैसे हैं। बच्चे तो एक आईना है। इसमें आप अपनी शक्ल देखिये। यदि बच्चे खराब हैं, अवज्ञाकारी हैं, दुष्ट-दुराचारी हैं, मिथ्याभाषी हैं या किसी अन्य बुरी आदतों के शिकार हैं तो इसका स्पष्ट प्रमाण है कि माता-पिता का आचरण और व्यवहार ठीक नहीं है। वे स्वयं खराब और गैर जिम्मेदार है जिन्होंने बच्चों को कोई संस्कार नहीं दिया। बड़ों को देखकर छोटे सीखते हैं। बच्चा अपने आप एक दिन, दो दिन या एक माह में खराब नहीं हुआ बल्कि माता-पिता ने परिश्रम करके वैसा उसे बनाया है। शायद इसीलिए एक डॉक्टर सत्यथी कहते हैं कि 'जन्म लेने पर प्रत्येक बच्चा ईमानदार होता है, कोरी स्लेट होता है परन्तु जन्म लेने के बाद वह कोशिश करके बेईमान बनता है।' बात बिल्कुल सही लगती है कि हाईस्कूल या इंटरमीडिएट तक अधिकांश बच्चे आज्ञाकारी होते हैं, माता-पिता को सम्मान देते हैं परन्तु जैसे ही वे कॉलेज में पहुंचते हैं, उम्र बढ़ती है प्राय: अधिकांश बच्चे अवज्ञाकारी हो जाते हैं। क्यों? इसलिए कि किशोरावस्था में उन्हें संस्कार नहीं दिया गया। जिसका दुष्परिणाम माता-पिता बाद में भुगतते हैं।

कैरियर बनाने और मेरिट में आने की दौड़ में अनेक माता-पिता बच्चों को पढ़ाई पर अधिक जोर देते हैं। स्कूल जाने, होमवर्क करने और जगह-जगह कोचिंग अटैंड करने के कारण वे खाना-पीना, सोना, आराम करना भूल जाते हैं। रात-दिन पढ़ाई के कारण तनाव में रहते हैं। दिमाग थक कर चूर हो जाता है जिसका बुरा प्रभाव उनके स्वास्थ्य पर पड़ता है। माना कि बच्चों की पढ़ाई जरूरी है परन्तु स्वास्थ्य की बलि देकर कतई नहीं। पढ़ने के साथ-साथ मन को रीलेक्स करने के लिए कुछ विश्राम करना, योगासन, व्यायाम और खेलकूद भी जरूरी है। बच्चों की छोटी-मोटी गलतियों के लिए उन्हें फटकारें और प्रताड़ित न करें बल्कि प्यार से समझा कर गलती का एहसास करावें। देखा गया है कि प्रत्येक कार्य के लिए बच्चे प्राय: माता-पिता पर आश्रित रहते हैं यह ठीक नहीं है। छोटे-मोटे कार्यों को स्वयं करने की आदत डालना चाहिए। उन्हें स्वावलंबन के गुर सिखाना चाहिए।

अकसर देखा जाता है कि बच्चे, युवक और बूढ़े तक टीवी देखते या अखबार पढ़ते हुए भोजन करते हैं। भोजन के समय न टीवी देखना चाहिए और न अखबार पढ़ना चाहिए। इससे भोजन का जो लाभ शरीर को मिलना चाहिए वह नहीं मिलता। भोजन करने का यह तरीका गलत है। इसी प्रकार अनेक लोग भोजन करते समय अनावश्यक और विवादास्पद बातें करते रहते हैं। बड़ों की देखा-देखी बच्चे भी ऐसा करने लगते हैं। भोजन या नाश्ते के समय बातचीत करना न केवल अशिष्टता है बल्कि स्वास्थ्य के लिए भी नुकसानदायक। ऐसा भोजन शरीर में नहीं लगता। बातचीत करने से भोजन श्वास नली में जा सकता है, जीभ कट सकती है। अत: भोजन चुपचाप शांतिपूर्वक ही करना चाहिए। बच्चों के अंदर भी यही संस्कार या यही आदत डालनी चाहिए। आधुनिक टेक्नोलॉजी का दुरुपयोग करके प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया सबसे ज्यादा मासूम बच्चों का संस्कार बिगाड़ रहा है। देश की भ्रष्ट और गंदी राजनीति को अखबार में रोज पढ़कर या टीवी में देखकर बच्चे और युवक पथभ्रष्ट हो रहे हैं। बच्चे समय से पहले जवान हो रहे हैं। युवतियों के अश्लील गीत पर बालिकाएं नृत्य कर रही हैं। माता-पिता स्वयं बच्चों को प्रोत्साहित कर रहे हैं जो ठीक नहीं है। मोबाइल और इंटरनेट ने बहुत सारी सुविधाएं प्रदान कर दी हैं। घर-घर में मोबाइल और इंटरनेट का अंधाधुंध प्रयोग हो रहा है। स्कूल और कॉलेज के बच्चे आज इस सुविधा का दुरुपयोग कर रहे हैं। अनेक अपराध मोबाइल और इंटरनेट के जरिये हो रहे हैं। इसके जरिये किसी जाति या धर्म में लव मैरिज करना बहुत आसान हो गया है। अत: जागरूक माता-पिता को इस ओर ध्यान रखना चाहिए कि उनके बच्चे टीवी पर क्या देख रहे हैं?

ऋषियों ने कहा है कि हमारे विचार छूत की बीमारी की तरह बहुत संक्रामक होते हैं। खासकर अशुभ विकारों का स्पंदन बहुत शक्तिशाली होता है। वाणी से निकला हुआ विचार न केवल अपने आस-पास बैठे लोगों को प्रभावित करता है बल्कि वायुमण्डल में सूक्ष्म रूप से फैलकर अनेक लोगों तक पहुंच जाता है। जो अचेतन और कमजोर होते हैं, खुले होते हैं वे उसके प्रभाव में आ जाते हैं। संदेश यह कि अशुभ विचार रखने वाले दुष्ट व्यक्तियों के पास न हमें स्वयं बैठना और मेलजोल बढ़ाना चाहिए और न बच्चों को। अन्यथा उनकी दुष्टता, दुर्जनता का प्रभाव हमारी चेतना पर भी अवश्य पड़ेगा। टीवी चैनलों पर प्रसारित अश्लील और आपराधिक कार्यक्रम भी इसी श्रेणी में आते हैं। अत: संस्कारवान बनना है तो शुभ ही बोले, शुभ ही देखें और शुभ ही सुनें।

माता-पिता और बच्चों को चार महाशत्रुओं से हमेशा सावधान रहने की जरूरत है। ये चार शत्रु हैं- निराशा, आलस्य, भय या संशय और नकारात्मक विचार। ये चारों अवगुण या इनमें से कोई एक अवगुण यदि किसी बालक में विद्यमान है तो यह पक्का मानिये कि ऐसा युवक जीवन में सफलता, समृद्धि, यश और सम्मान अर्जित नहीं कर सकता। ये अवगुण सदा मनुष्य को पीछे की ओर खींचते रहते हैं। आगे नहीं बढ़ने देते। तरह-तरह की बाधाएं खड़ी करके प्रगति के सारे दरवाजे बंद कर देते हैं जो कुछ हम बन सकते हैं उस संभावना की हत्या कर देते हैं। संस्कार निर्माण में इन चारों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अत: माता-पिता और शिक्षकों का पुनीत कर्तव्य है कि वे इस बारे में अबोध बच्चों को हमेशा सावधान करते रहें। आलस्य का परित्याग कर उन्हें परिश्रमी, कर्मशील और आशावादी बनाएं? उनमें निराशा का भाव न आने दें। कायर, दब्बू और डरपोक बिल्कुल न बनने दें। सकारात्मक दृष्टिकोण रखने वाले संकल्पवान और साहसी व्यक्ति ही मंजिल पर पहुंचते हैं।

-एच-104, चिनार रिट्रीट, अपोजिट मैदा मिल,
अरेरा हिल्स, भोपाल-462011 (मध्यप्रदेश)

न्यूमरोलॉजी में नंबर 7 का महत्व

नीता बोकाड़िया

संवेदनशील, जिंदादिल, रोमांटिक और दोस्तों के दोस्त नबंर-6 की रंगीन दुनिया की सैर करने के बाद अब जानिए भावुक, विध्वंसक रोमांटिक और आध्यात्मिक नंबर-7 की अजीबोगरीब शख्सीयत : किसी भी महीने की 7, 16, और 25 तारीख को पैदा हुए लोगों का रूलिंग प्लेनेट केतु (नेपचून) होता है। केतु राहु से कम कुटिल होता है। केतु व्यक्ति को सही गलत की पहचान की क्षमता देता है और व्यक्ति बेहद संवेदनशील और भावुक बन जाता है और वास्तविक ज्ञान के प्रति उसका रूझान बढ़ जाता है। इसके बावजूद केतु व्यक्ति को विध्वंसक और बाधक बनाता है। ये लोग बातूनी होते हैं। बहसबाजी में ये खासी दिलचस्पी रखते हैं। हर मसले पर इनके अपने ही तर्क होते हैं।

नंबर-7 लोगों की दृष्टि विस्तृत और नजरिया व्यापक होता है। ये हर धर्म की अच्छी-अच्छी बातों को स्वीकार करते हैं। धर्म के बारे में ये जरा अलग विचार रखते हैं और पिटी-पिटाई लकीर पर चलने में यकीन नहीं रखते। केतु के दोस्तों की बस्ती को राहु-बुध-शुक्र और शनि आबाद रखते हैं, वहीं सूर्य, चंद्र और मंगल केतु के खिलाफ तलवारे खींचने को आमादा रहते हैं।

केतु से प्रभावित लोग बेचैन, मूडी और क्रांतिकारी विचारों के होते हैं। इसलिए लगातार परिवर्तन और यात्रा इन्हें सुकून देते हैं। इन्हें दुनिया की मुकम्मल जानकारी होती है। ये नर्म दिल, व्यवहार कुशल, रोमांटिक और दार्शनिक किस्म के होते हैं। नंबर-7 लोग अमीर-गरीब में फर्क नहीं करते। ये सबके साथ समान रूप से दोस्ताना बर्ताव करते हैं। ये लोग अच्छे लेखक, कवि और चित्रकर्मी होते हैं। केतु का जल तत्व से विशेष संबंध होने के कारण समुद्र पार की यात्रा, व्यापार और आयात-निर्यात में विशेष सफलता मिल सकती है।

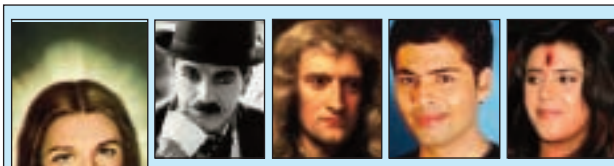

कुछ खास नंबर-7 की हस्तियां

जीसस क्राइस्ट	25 दिसम्बर
चार्ली चेपलीन	16 अप्रैल
सर आइजक न्यूटन	25 दिसम्बर
करन जौहर	25 मई
एकता कपूर	7 जून

प्रकृति भी अंकों के इशारों पर चलती है। नंबर-7 का अंक तो ईश्वर की शक्ति का स्वरूप है। आइए अब 7 अंक का महत्व देखें- सप्ताह के 7 दिन, अनेक धर्मों में 7 स्वर्ग और 7 नरक की कल्पना की गई है। संगीत के 7 स्वर माने गये हैं। मुख्य ग्रह 7 है। ईसाइयों के प्रमुख 7 चर्च हैं।

इनके लिए सोमवार काफी अनुकूल होता है और लाइट ग्रीन और वाइट इनके लिए शुभ रंग होते हैं। शिव की आराधना करना और सोमवार का व्रत रखना इसके लिए शुभ फलदायी होता है। नंबर-7 लोगों के लिए समानार्थी नंबर 2, 11, 20 और 29 भी सौहार्द भरे और महत्वपूर्ण होते हैं।

मो. 09920374449
E-mail: neettakbokaria@hotmail.com

दिव्य आध्यात्मिक शक्ति है मौन

माला वर्मा

खामोशी-इसे नीरवता, चुप्पी, सन्नाटा या फिर ओम शांति का नाम दें। कितना कुछ निहित है इस खामोशी में, नीरवता में। कितनी शीतल है यह नीरवता, जहां चुप्पी शांत सरोवर के सतह की तरह है वहीं इसका टूटना समुद्र की उत्ताल तरंगों की तरह है। खामोशी हमारे चंचल मन को करोड़ों वर्ष पुरानी उस आदिम अवस्था में पहुंचा देती है जहां सब कुछ शांत था। हर चीज की उत्पत्ति नीरवता से होती है और उसकी समाप्ति भी-सिर्फ इसके दरमियान हजारों तरह के क्रियाकलाप, उथल-पुथल, भागदौड़ आदि का स्थान है।

नदी का उद्गम शांत होता है और उस वक्त भी बेहद शांत होती है जब यह यात्रा के अपनी अंतिम पड़ाव यानी किसी विशालकाय समुद्र से जा मिलती है। अशांत होता है तो सिर्फ इसके बीच का मार्ग जब यह उफनती, लहराती, चोट खाती अपना मार्ग तय करती है।

रातभर चुप्पी साधे रखने के बाद सुबह होते ही पक्षियों का कलरव शुरू होता है और रात होते-होते वही सन्नाटा। हर क्रियाकलाप का अंत खामोशी में निहित है। अत: नीरवता बनाये रखने का स्थान इसके तोड़ने से ज्यादा महत्वपूर्ण है तभी तो कहा गया है कि अगर बोलना रजत के समान है तो चुप्पी स्वर्ण जैसा। मौनव्रत का आध्यात्मिक महत्व मुखर रहने से ज्यादा है। ऋषि मुनियों ने इसका अभ्यास कर आध्यात्मिकता की ऊंचाइयों को स्पर्श किया है। कई आध्यात्मिक गुरुओं की चुप्पी से उनके शिष्यों ने शिक्षा व प्रेरणा पाई है। हमारे धार्मिक ग्रंथों में ऐसे कई मौनव्रती ऋषि-मुनियों की चर्चाएं हैं।

मौन का अर्थ अकर्मण्यता नहीं। प्रकृति कहे या ईश्वर, पूरे ब्रह्माण्ड को चुपचाप ही तो चला रहे हैं। दो हृदयों के बीच जब प्रेम अत्यधिक गहरा हो जाता है तो भावाभिव्यक्ति बिना कुछ बोले भी होती रहती है। ऐसा लगता है जैसे एक हृदय से दूसरे हृदय की बातचीत की भाषा मौन ही है। पूरे ब्रह्माड में नीरवता व्याप्त है और इस चुप्पी को हम पृथ्वीवासी ही तोड़ते हैं। अगर हमें ब्रह्म में लीन होना है तो मौनव्रत एक अति प्राचीन पथ है। इसी व्रत का पालन कर हम अपने मन के अंदर झांक सकते हैं और मन में निहित अपनी आध्यात्मिक शक्ति या ईश्वर को पहचान सकते हैं। गौतम बुद्ध तथा वर्द्धमान महावीर इसी व्रत का पालन करते हुए समाधिस्थ हुए तथा विश्व को एक नई राह दिखलाए। सृष्टि का आदि व अंत भी नीरतवा में ही है और इसके बीच की वाचालता हमारे मन की उद्विग्नता को हद से ज्यादा न बढ़ा पाये इसके लिए हमें नीरव व शांत रहने का प्रयत्न करना चाहिए। अगर हम मानसिक रूप से शांत हैं तो हमारा परिवार शांत है, हमारा समाज शांत है, हमारा देश शांत है और शायद इसी तरह विश्व में भी शांति बनी रह सकती है।

-हाजीनगर, 24 परगना उत्तर-743135 (पश्चिम बंग)

कविताएं

प्रेम सुधारस कह कोई

मनोज जैन

जब पीर पिघलती है मन की,
तब गीत नया मैं गाता हूं।
सम्मान मिले जब झूठे को,
सच्चे के मुंह पर ताला हो
ममता को कैद किया जाए,
समता को देश निकाला हो।
सपने जब टूट बिखरते हों,
तब अपना पफर्ज निभाता हूं।
छलबल जब हाबी होकर के,
करुणा को नाच नचाते हैं
निष्कासित प्रतिभा हो जाती,
पाखण्ड शरण पा जाते हैं।
तब रोती हुई कलम को मैं,
चुपके से धीर बंधाता हूं।
वैभव दुत्कार गरीबी को,
पग पग पर नीचा दिखलाए,
जुगनू उड़कर के सूरज को
जलने की विद्या सिखलाए।
तब अंतरमन में करुणा की
घनघोर घटा गहराता हूं।
जब प्रेम सुधारस कह कोई
सम्मुख विष का प्याला धरता है
आशा मर्यादा निष्ठा को
जब कोई घायल करता है।
मैं छंदों का संजीवन ले
मुर्दों को रोज जिलाता हूं।

–सी/एस–13, इन्दिरा कॉलोनी
बाग उमराव दुल्हा
भोपाल–10 (म.प्र.)

सादगी अच्छी

श्याम श्रीवास्तव

बहुत बोझा नहीं अच्छा
सफ़र में सादगी अच्छी।

चले जो चूमने तारे
जमीं छूटी, वतन छूटा
परायों के निकट आते
सगे से भी सगा रूठा
सजी शीशे, मिठाई से
गज़क गुड़ की पगी अच्छी।

कहां छोटा गगन अपना
कहां इतनी बड़ी दुनिया
समुन्दर तो नहीं दिल जो
समां जांये सभी नदियां
मिले स्वर ताल–लय जिनसे
उन्हीं से दिल्लगी अच्छी।

न जाओ इश्तहारों पर
कई कुछ पेंच ख़म इनमें
किसी के हो नहीं सकते
लगे जो खुद चमकने में
सितारे पूजने से तो
छतों की बन्दगी अच्छी।

–988 सेक्टर–आई.एल.डी.ए,
कानपुर रोड
लखनऊ (उ.प्र.)

कब दर्शन देने आओग

राजेन्द्र बहादुर सिंह 'राजन'

क्या कुछ लेकर आये थे तुम
क्या कुछ लेकर जाओगे,
कर लो प्रेम सभी से प्यारे
वरना फिर पछताओगे।

धन, बल, बुद्धि, ज्ञान, पद का
मत कर गुमान रे तू बन्दे,
ये सब प्रभु की देन, उसी के
चरणों में सुख पाआगेगे।

क्यों दुष्कर्म कर रहे भाई
आंख मूंदकर रात–दिवस,
फूटेगा जब घड़ा पाप का
कैसे मुंह दिखलाओगे?

चार दिनों का जीवन है
फिर क्यों लड़ते हो आपस में
करो भलाई सबके संग
सबसे अच्छे कहलाओगे

करो सदा स्मरण परम प्रभु का
उससे पूछो 'राजन'
पानिधान बताओ कब तक
दर्शन देने आओगे?

–ग्राम–फत्तेपुर, पो. बेनीकामा
जिला–रायबरेली–229402 (उ.प्र.)

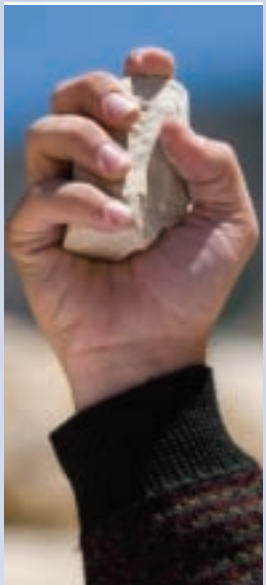

माँ

डॉ. ललित फरक्या

माँ तुम हो
मेरी नसों में अविरल
बहता रक्त,
सांसों की निर्बाध
स्पन्दन,
नेत्रों की अक्षुण्ण
ज्योति,
जीवन की प्रथम
शिक्षक,
और
सुसंस्कारों की मार्गदर्शक।
माँ तुम हो
मुझ पुष्प में
सुमधुर सुगंध
ज़िन्दगी के फलसफ़ों की
स्वर्णिम इबारत,
प्रेम, स्नेह, सहयोग की
प्रतिरूप मूरत
तुम्हारे असीम आशीष
से आबाद
मेरा चमन
हे माँ,
तुम्हें शत्–शत् नमन।

–14, गोविन्द नगर, दशपुर
मंदसौर (म.प्र.)

ग़ज़ल

राजेन्द्र तिवारी

है सबके हाथ में पत्थर, संभाल कर रखना
उठा रहे हो, मगर सर संभाल कर रखना

न जाने कौन सी तहज़ीब के तहत हमको
सिखा रहे हैं वो ख़ंजर संभाल कर रखना

लकीरें काम न आयेंगी तेरे माथे की
हथेलियों में मुक़द्दर संभाल कर रखना

खुशी हो, ग़म हो, न छलकेंगे आंख से आंसू
मैं जानता हूं समन्दर संभाल कर रखना

तुम्हारे सजने संवरने के काम आयेंगे
मेरे ख़याल के ज़ेवर संभाल कर रखना

–'तपोवन', 38–बी, गोविन्द नगर
कानपुर–208006 (उ.प्र.)

पिंजरे में पेड़

शुभदा पांडेय

राजा को बड़ा शौक था लीचियों का
पर लगती/बचती नहीं थीं लीचियां
बमुश्किल बचा एक पौधा
जो समय आने पर बना पेड़
दूर–छूट गए बाड़े, किनारे
अब वह बन गया सीधा पर्यावरण
हवा लेता, हवा देता
धूप लेता, छांव देता
पानी पीता, रस देता
गीत लेता, गंध देता
उम्र होने पर आए पूफल
राजा बहुत खुश हुआ
दिन में काफी समय
उसके पास बिताता/बतियाता
उसे अच्छा नहीं लगता
चिड़ियों का आना
चिड़ियों का गाना
भौरों का झूलना
तितली का खिलना
वह कुढ़ता मन ही मन
एक दिन बुला कर बढ़ई
दिला दिया नाप
बनवाया बड़ा सा पिंजरा
पेड़ कैद हो गया
राजा खुश
वह दुखी हो गया
सबेरे राजा दौड़कर गया उसके पास
पूफल–पफल तो बहुत दूर
मुरझा गये थे उसके डाल और पात

–असम विश्वविद्यालय
सिलचर–788011 (असम)

आओ नवनिर्माण करें

सुरेन्द्र अंचल

यह भरतों का देश–भारत
आओ नवनिर्माण करें।
हल और हंसियां ले हाथ में
कृत संकल्प प्रयाण करें।
सदा श्रमिक की हो जय–जय।
सैनिक की हो विजय सदा।
सभी अभय, सभी सहृदय–
आतंकवाद को कहे अलविदा!
वसुधैव कुटुम्बकम का नारा
सब कष्टों का परित्राण करें।
यह भरतों का देश–भारत
आओ नवनिर्माण करें।

–2/152, साकेत नगर
ब्यावर (राजस्थान)

ग़ज़ल

किशन स्वरूप

वो जैसा भी है वैसा है, वैसा ही स्वीकार करो
सपने उम्र–दराज़ न हों तो, ये सच अंगीकार करो

जितने जुल्म सहोगे उतने, और बढ़ेंगे, याद रहे
क्षमता जितनी भी है उनका उतना, तो प्रतिकार करो

ऊपर–ऊपर जो दिखता है वही आईना कह देगा
लेकिन अंदर जो बैठा है उसका भी श्रृंगार करो

जनता त्राहि–त्राहि करती है, पफैली भ्रष्ट व्यवस्था से
लावा पूफट पड़ेगा इकदिन इतना मत लाचार करो

टूटी नाव, उफनता दरिया, घोर नशे में है मांझी
हिम्मत करो, हौसला रखो, हाथों को पतवार करो

जीवन भर अच्छे से जीना, ज्यादा कठिन नहीं लोगो
जैसा तुम खुद को चाहो हो, वैसा ही व्यवहार करो

थे कुछ अच्छे लोग न जाने कहां गए धीरे–धीरे
उनके पद चिन्हों पर चलकर सपनों को साकार करो

ऐ स्वरूप! सच को सच कहना मुश्किल हुआ अदालत में
ऐसी भ्रष्ट व्यवस्था है तो अवसर देखो, वार करो

–108/3, मंगल पांडे नगर, पो. मेरठ (उ.प्र.)

गीत

डॉ. बी. पी. दुबे

ज़िन्दगी हार है, ज़िन्दगी जीत है।
ज़िन्दगी है तो सांसों का संगीत है।।

ज़िन्दगी से सदा प्यार जिसने किया
सारा जीवन खुशी से है उसने जिया
मुश्किलें कुछ कठिन उसको रहतीं नहीं–
पूफल कांटों से जिसकी सदा प्रीत है...

जिसकी नज़रों में न कोई छोटा बड़ा
जो ग़रीबों के हित में लड़ाई लड़ा
जो डराये न धमकाये निर्भय सदा–
भय दिखाता है जो वह ही भयभीत है...

इसका सुनना कठिन इसका गुनना कठिन
बाद इसके भी इसका समझना कठिन
वक़्त ही जिसको दुहराये गाये सदा
ज़िन्दगी वह प्रकृति का अमर गीत है
ज़िन्दगी हार है ज़िन्दगी जीत है।
होटल संगम के सामने, चौराहा

–5, सिविल लाइंस, सागर–470001
(मध्य प्रदेश)

मृत्यु

नरेश कुमार 'उदास'

मृत्यु के नाम से ही
घबराने लगते हैं लोग
जबकि, जीवन–मृत्यु का चक्र
चलता रहता है बार–बार
हम जन्म लेते हैं
तो देह त्यागकर
मृत्यु को अपनाते हैं।
यही जीवन का
शाश्वत सत्य है
जिसे नकारा नहीं
जा सकता कभी भी।
यह अलग बात है कि,
मृत्युशैया पर लेटा मानव
रोता–कलपता है
जीवन का मोह
उसे तड़पफाता है गहरे।
लेकिन मृत्यु में ही छिपा है
नये जीवन का सार
यह सिलसिला
यूं ही चलता रहा है
तथा यूं ही चलता रहेगा
जब तक जीवन संभव है
इस धरा पर।

–हिमालय जैव सम्पदा
प्रौद्योगिकी संस्थान
पालमपुर–176061 (हि.प्र.)

नन्हा पौधा और मैं

सीताराम गुप्ता

जेठ की भरी दुपहरी
चिलचिलाती धूप
आँगन में एक गमला
गमले में
सेर भर मिट्टी में
लू के थपेड़ों से निढ़ाल
दोहरा हुआ नन्हा कोलियस
मिलते ही
दो अँजुलि पानी
खड़ा हो जाता है
तनकर सीधा
स्वागत में
हिलती हैं
नन्हीं–नन्हीं पत्तियाँ
मृदु मुस्कान बिखेरतीं–सी
बिठा लेती हैं
मुझे अपने पास
जेठ की इस दुपहरी में

–ए.डी.–106–सी, पीतमपुरा
दिल्ली–110034

विवेचन

साध्वी कल्परसाश्री

ऐसे होती है नए वातावरण की सृष्टि

इस दुनिया में सबसे ज्यादा मूल्यवान है जीवन। और भी बहुत सारी वस्तुएं हैं जिनका मूल्य है किन्तु तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो सबसे अधिक मूल्य है जीवन का। जीवन के होने पर सब कुछ है। जीवन न हो तो कुछ भी नहीं है। जिसके होने पर अन्य सबका अस्तित्व सामने आता है, उसका मूल्य कितना हो सकता है, इसको हर कोई समझ सकता है। व्यक्ति का सारा प्रभाव उसकी जीवन शैली पर निर्भर है। प्रश्न है- वह जीता कैसे है?

जीना एक बात है और कैसे जीना बिल्कुल दूसरी बात है। यदि वह कलात्मक ढंग से जीता है तो जीवन बहुत सार्थक और सफल बन जाता है। यदि वह जीवन को जीना नहीं जानता, जीने की कला को नहीं जानता तो जीवन नीरस, बोझिल और निरर्थक जैसा प्रतीत होने लग जाता है। इसलिए आवश्यक है जीवनशैली का ज्ञान।

वर्तमान की जीवनशैली अच्छी नहीं मानी जा रही है, इसके कई कारण है। भागदौड़, स्पर्धा, उतावली, हड़बड़ी आदि ऐसे तत्व जीवन में समा गये हैं जो जीवन को सार्थक नहीं बना रहे हैं। शरीर स्वस्थ रहे, यह जीवन का लक्ष्य है। दूसरा लक्ष्य है मन स्वस्थ रहे, प्रसन्न रहे। तीसरा लक्ष्य है भावनाएं स्वस्थ रहें, निर्मल रहे। निषेधात्मक विचार न आएं, विधायक भाव निरंतर बने रहें, मैत्री और करुणा का विश्वास होता रहे। ये सब जीवन के उद्यान को हरा-भरा बनाने के लिए जरूरी है।

आज चारों ओर से एक स्वर सुनाई दे रहा है- वर्तमान की जीवनशैली अच्छी नहीं है, उसमें परिवर्तन होना चाहिए, वह बदलनी चाहिए। किन्तु जीवनशैली कैसे बदले? यह एक बड़ा प्रश्न है।

जैनधर्म की जो जीवनशैली है, वह वीतरागता की शैली है। इस रागात्मक दुनिया में पदार्थ और धन के प्रति अत्यधिक आकर्षण वाली इस दुनिया में यदि कोई समाधान हो सकता है तो वह वीतरागता का समाधान है। वीतरागता की ओर जाने वाली जीवनशैली सचमुच एक समाधान है।

मिथ्या दृष्टिकोण के कारण, आज हिंसा बहुत बढ़ रही है, आतंक बढ़ा है, एक-दूसरे के प्रति संदेह बढ़ा है, विश्वास घटा है। ऐसा लगता है कि जीवन कहीं सुरक्षित नहीं है। ऐसा कोई स्थल, कोई आश्वासन आदमी खोज नहीं पा रहा है, जहां उसे सुरक्षा मिलती हो। इस मिथ्या दृष्टिकोण ने आदमी को इतना उलझा दिया है कि वह कोई निर्णय नहीं कर पा रहा है। राग संसारी प्राणी का एक जीवन सूत्र होता है किन्तु जहां रागात्मकता सीमा पार कर जाती है वहां वह जीवन-सूत्र न बनकर मृत्यु सूत्र बन जाती है। आज ऐसा लगता है कि रागात्मकता मृत्यु का सूत्र बनती जा रही है, क्योंकि उसके सामने कोई प्रतिरोधक शक्ति नहीं है।

रागात्मकता के प्रति जो अति आकर्षण बढ़ा है। चाहे वह जाति, धर्म भाषा, प्रांत आदि किसी भी संदर्भ में हो, उस पर एक अंकुश लगे तो निश्चय ही हमारी जीवनशैली एक शांति देने वाली, न्याय देने वाली, गरीब और अमीर के बीच की दीवार को मिटाने वाली शैली बनेगी।

पारिवारिक और सामुदायिक जीवन में अनेक व्यक्ति साथ होते हैं। ऐसे में रुचि भेद, विचार भेद, चिंतन भेद स्वाभाविक है। सब लोग एक रुचि वाले और एक दृष्टि से सोचने वाले हों, यह संभव नहीं है। जहां इस तरह के भेद हों वहां टकराव और संघर्ष भी होंगे। इससे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। प्रश्न है- क्या आदमी सदैव संघर्ष का ही जीवन जीयेगा? सदा लड़ता-झगड़ता और मरता-मारता ही रहेगा?

नहीं, इसका एक दूसरा पक्ष भी है, जहां अनेक है, वहां सह-अस्तित्व भी है, साथ में रहना है, साथ में जीना है। विरोध है किन्तु विरोध नहीं भी है। सह-अस्तित्व के बीज भी उसी भूमि में बोये हुए हैं। हम उन सह-अस्तित्व के बीजों को अंकुरित करने का प्रयत्न करें। सह-अस्तित्व के लिए आवश्यक है- एक-दूसरे की भावना को समझें, एक-दूसरे के विचारों का मूल्यांकन करें। मैं अपने विचारों को सत्य मानता हूं, दूसरा अपने विचारों को सत्य मानता है, झगड़ा तब शुरू होता है, जब दूसरे के विचारों को असत्य बताया जाता है। इस संदर्भ में हमें चिंतन करना होगा-'तुम अपने विचारों को सत्य मानो, किन्तु दूसरे के विचारों में भी सच्चाई खोजने का प्रयत्न करो। यदि यह मार्ग उपलब्ध हो जाता है तो सह-अस्तित्व की आधार-भूमि निर्मित हो जाती है। यह सूत्र हमारे सामने जीवन की सार्थकता को प्रस्तुत करता है, जीवन को आनंदमय बना देता है।

जो व्यक्ति आत्मिक धरातल पर नहीं जीता, आत्मा की अनुभूति नहीं करता, वह अहिंसा का आचरण नहीं कर सकता। जो व्यक्ति सामाजिक जीवन में अहिंसा का मूल्य आंकता है और चाहता है कि समाज हिंसा, अराजकता और आंतक का अखाड़ा न बने उसके लिए न्यूनतम आचार संहिता है कि वह अनावश्यक हिंसा न करे।

अनावश्यक हिंसा से बचने का सबसे पहला परिणाम होता है- पर्यावरण के प्रदूषण की समाप्ति। आज पर्यावरण का जो प्रदूषण बढ़ा है, उसमें अनावश्यक हिंसा का बहुत बड़ा हाथ है। कितना पानी का अपव्यय, कितने जंगलों की कटाई, कितने पशु-पक्षियों का निर्ममता से शिकार, कितनी वनस्पतियों का विनाश, कितनी अनावश्यक भूमि का खनन, दोहन यह सब अपने स्वार्थ के लिए इतनी मात्रा में हो रहा है कि वातावरण तेजी से प्रदूषित होता जा रहा है। यदि अनावश्यक हिंसा टल जाए तो पृथ्वी पर शांति कायम हो जाए, आदमी भी खुशहाल हो जाए।

कर्मकांड

संदीप कुमार

फलदायी है श्राद्ध-कर्म

देशे काले व पात्रे च विधिना हषिता च यत्।
तिलैर्दभैंश्र मन्त्रेश्र श्राद्धं स्याच्छ्रद्धया युतम्॥

महर्षि पाराशर श्राद्ध का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि 'देश, काल तथा पात्र में विधि द्वारा जो कर्म, तिल, यव, कुश और मंत्रों द्वारा श्रद्धापूर्वक किया जाये, वही श्राद्ध है।' कूर्मपुराण में श्राद्ध की महत्ता का विस्तृत वर्णन है। इस पुराण के अनुसार कृष्ण पक्ष में चतुर्दशी को छोड़कर प्रतिपदादि अन्य तिथियां उत्तरोत्तर प्रशस्त हैं। पूस, माघ और फाल्गुन- तीनों मास की कृष्णाष्टमी, नवमी और अमावस्या तथा माघ मास की पूर्णिमा तिथि श्राद्ध करने के लिए पुण्य तिथियां हैं। वर्षा ऋतु में मघा नक्षत्रयुक्त त्रयोदशी तिथि और फसल के पकने का समय विशेष रूप से श्राद्ध करने का समय होता है। चंद्र और सूर्य के ग्रहणकाल तथा बांधवों की मृत्यु पर श्राद्ध करना चाहिए। ऐसा न करने पर नारकीय गति प्राप्त होती है। ग्रहण आदि के समय किये गये काम्य श्राद्ध प्रशस्त माने गये हैं। सभी नक्षत्रों में विशेष रूप से काम्य श्राद्ध करना चाहिए।

कृतिका नक्षत्र में श्राद्ध करने से स्वर्ग-प्राप्ति होती है। रोहिणी में श्राद्ध करने से संतान, मृगशिरा में ब्रह्मतेज, आर्द्रा में रौद्र कर्मों की सिद्धि तथा शौर्य की प्राप्ति होती है। पुनर्वसु में भूमि, पुष्य में लक्ष्मी, आश्लेषा में सभी कामनाओं तथा मघा नक्षत्र में श्राद्ध करने से सौभाग्य प्राप्त होता है। इसी प्रकार, उत्तरा फाल्गुनी में श्राद्ध करने से धन, विशाखा में सुवर्ण और अनुराधा में मित्रों की प्राप्ति होती है। पूर्वाफाल्गुनी में पाप का नाश होता है। हस्त में अपनी जाति में श्रेष्ठता, स्वाति में व्यापार-चिन्ह, ज्येष्ठा में राज्य और चित्रा में श्राद्ध करने से बहुत-से पुत्रों की प्राप्ति होती है। मूल नक्षत्र में कृषि, पूर्वाषाढ़ा में सफल यात्रा, उत्तराषाढ़ा में कामनाओं की सिद्धि, श्रवण में श्रेष्ठता, धनिष्ठा में कामना-पूर्ति, शतभिषा में परम बल तथा पूर्वभाद्रपद नक्षत्र में सोने-चांदी से भिन्न धातुएं और उत्तरभाद्रपद में उत्तम घर प्राप्त होता है। रेवती में गौएं, अश्विनी में घोड़े और भरणी नक्षत्र में किये गये श्राद्ध से आयु प्राप्त होती है। रविवार को श्राद्ध करने से आरोग्य, सोमवार को सौभाग्य, मंगलवार को सर्वत्र विजय, बुधवार को समस्त कामनाओं की सिद्धि, बृहस्पतिवार को अभीष्ट विद्या, शुक्रवार को धन और शनिवार को आयु प्राप्त होती है।

प्रतिपदा को श्राद्ध करने से उत्तम पुत्र, द्वितीय में कन्या, तृतीया को बंदीजन, चतुर्थी में क्षुद्र पशु व षष्ठी में श्राद्ध करने से सुंदर पुत्रों की प्राप्ति तथा द्यूत में विजय होती है। सप्तमी में कृषि, अष्टमी में वाणिज्य लाभ, नवमी में एक खुर वाले तथा दशमी में दो खुर वाले बहुत-से पशुओं का लाभ होता है। एकादशी को रजत पदार्थ, द्वादशी को सोना-चांदी, त्रयोदशी की जाति में श्रेष्ठता तथा पंचदशी को श्राद्ध करने वाला सभी कामनाओं को प्राप्त करता है। चतुर्दशी को श्राद्ध करने से कुप्रजा की प्राप्ति होती है। अतः इस तिथि को श्राद्ध नहीं करना चाहिए। इस तिथि को उनका श्राद्ध करना जो शस्त्रादि से मृत हुए हों।

मनु ने प्रतिदिन किये जाने वाले नित्य, काम्य, एकोदृष्टिादि, वृद्धि और पार्वण- इन पांच प्रकार के श्राद्धों का वर्णन किया है। यात्रा के समय किया जाने वाला छठा श्राद्ध कहा गया है। ब्रह्मा ने शुद्धि के लिए सातवें श्राद्ध का वर्णन किया है। आठवें दैविक नामक श्राद्ध करने से मुक्ति हो जाती है। मनुस्मृति में पांच, भविष्यपुराण में बारह और मत्स्यपुराण में तीन प्रकार के श्राद्धों का उल्लेख है। संध्या और रात्रि में श्राद्ध नहीं करना चाहिए, किन्तु ग्रहण-काल में रात्रि को भी श्राद्ध किया जा सकता है। गया, गंगा, प्रयाग, कुरुक्षेत्र तथा अन्य तीर्थों में श्राद्ध करने से पितर सदा संतुष्ट रहते हैं। महर्षि जाबालि के अनुसार, पितृपक्ष में श्राद्ध करने से पुत्र, आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य तथा अभिलषित वस्तु की प्राप्ति होती है। जो लोग आश्विन मास में अपने पित्तरों का श्राद्ध नहीं करते हैं, उन्हें पितर शाप देते हैं। सच्ची श्रद्धा, विश्वास और पवित्र भावना से किया गया श्राद्ध अवश्य फलदायी होता है।

आधी दुनिया

सत्यनारायण पंवार

स्त्री होने का दर्द

सबसे पुराना सनातन हिन्दू धर्म बताने वाले शास्त्रकारों ने 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' बता लेने के बाद भारत में किस तरह पुरुषों ने फिर सिद्ध किया कि 'नारी नरक को द्वार...', 'माया महाठगिनी हम जानी, न स्त्री स्वातंत्र्य मर्हति।' इतना ही नहीं 'पिता रक्षति कौमारे।' जब स्त्री कुंवारी हो तो उसके शरीर की रक्षा उसका पिता करे, युवती हो तो पति करे और वृद्धा हो जाये तो पुत्र करे। सारी दुनियां को भाईचारे की सीख देने वाला मजहब है उसके अनुसार स्त्री बस एक खेत है मर्द के लिए। औरत मर्द को अपना आका और अपने को गुलाम समझे।

क्रिश्चियन धर्म की क्या बात करें? वह धर्म स्त्री की कितनी इज्जत फैला रहा है? हाथ में हाथ डालकर चलने की बात में भी क्या दम है? कब कोई पुरुष गले में 'गलवाही' में डाल देगा, इसका पता क्या किसी अंग्रेज औरत को होता है? सुन्दर दिखने, अच्छा लगने, मन को भाने के सिद्धांत पर बने अंग्रेजी जोड़ों का इन्हीं आधारों पर कब किस स्त्री को असुन्दर, बुरी नापसंद कहकर त्याग देगा इसका कोई और ठिकाना है। वास्तव में दुनिया के सारे धर्म प्राचीन काल से स्त्री के खिलाफ रहे हैं। इसके लिए सारे धर्म मजहब स्त्रियों के लिए नियम कानून बनाते रहे हैं और पुरुष प्रधान समाज को प्रोत्साहन देते रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र के सर्वेक्षण द्वारा पता चला है कि भारत में करीब दो तिहाई विवाहित महिलाएं घरेलू हिंसा का शिकार है। रिपोर्ट के अनुसार 15 वर्ष से लेकर 49 वर्ष की 70 प्रतिशत महिलाएं यौन शोषण, मारपीट जैसी हिंसात्मक गतिविधियों की शिकार होती हैं। इस सर्वे से पता चलता है कि आज भी भारत में पुरुष प्रधान समाज है।

अधिकतर परिवारों में स्त्रियां अपना रहन-सहन, कपड़े लत्ते, घूमना-फिरना, शादी करना, पढ़ना-लिखना अपनी मर्जी से नहीं कर सकती और उन्हें अपने परिवार के बुजुर्गों के बतायें रास्तों पर चलना पड़ता है। हाल ही में एक पिता ने दिनदहाड़े शहर के बीचो-बीच अपनी लड़की की पिस्तौल से गोली मारकर हत्या कर दी क्योंकि उस लड़की ने अपनी पसंद के लड़के से शादी कर ली। हाल ही में इस्लाम धर्म के ठेकेदारों ने टेनिस की अंतर्राष्ट्रीय खिलाड़ी सानिया मिर्जा की ड्रेस पर एतराज किया। इस प्रकार भारत में स्त्रियों की स्वतंत्रता के विरोध में पुरुषों की आवाजें उठती रहती है। हमारा समाज उन्नति की ओर अग्रसर हो रहा है लेकिन इस पुरुष प्रधान समाज में पुरुष सोचते हैं कि स्त्रियों का शरीर उसको अपने पसंद की ड्रेस पहनने का अधिकार नहीं है। आज भी हमारे समाज में अधिकतर लोग खासकर पुरुष स्त्रियों की स्वतंत्रता में विश्वास नहीं रखते।

स्त्री-स्वतंत्रता के अधिकार रक्षा के लिए कई कानून बनाये गये हैं उसके अधिकारों को हनन करने वालों के लिए सजा का भी प्रावधान है, चाहे वह कोई भी क्यों न हो, लेकिन पारिवारिक और सामाजिक जीवन महज कानूनों से नहीं चलता। सरकार भले ही स्त्रियों की रक्षा और सुरक्षा के लिए कानून बनाए लेकिन पुरुष प्रधान समाज में रोज स्त्रियों पर अत्याचारों जैसे बलात्कार, दहेज के लोभ में उनको जलाना और अन्य हिंसात्मक घटनाएं समाचार पत्रों में पढ़ने को मिलती है। यह सब स्त्रियों पर पुरुष अत्याचारों का कारण है। जब तक पुरुषों के दिमाग से यह बात नहीं निकलेगी, हमारा समाज पुरुष प्रधान ही रहेगा और अपराधों का सिलसिला कभी समाप्त नहीं होगा। दुनिया में सभी लोग खासकर पुरुषों को अपने दिमाग से ये पुरानी पुरुष प्रधानता की आदत को भूलना होगा और स्त्रियों को पूर्ण स्वतंत्रता देनी होगी।

-68, गोल्फ कोर्स स्कीम, जोधपुर-342011 (राजस्थान)

जैनत्व क्या है?

डॉ. महावीर राज गेलड़ा

- जैनधर्म वीतरागता का धर्म है। समता का धर्म है।
- जैनदर्शन अनेकांत का दर्शन है। अनेक दृष्टियों से सत्य और अहिंसा अस्तित्व को जानने का प्रयास है।
- जैन विज्ञान सृष्टि के अनादि-अनंतकाल के होने का विज्ञान है।
- जैन गणित, न निरपेक्ष शून्य से प्रारंभ होती है और न निरपेक्ष उत्कृष्ट अनंत में समाप्त होती है। इसलिए समस्त सृष्टि के द्रव्य सापेक्ष हैं।
- जैन नीति अहिंसा और अपरिग्रह के सिद्धांतों से अनुप्राणित है, जो प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव से प्रभावित थी।
- जैन संस्कृति समता, सहिष्णुता और मैत्री भाव का प्रतीक है। असंग्रह, संयम और परस्पर सहयोग की भावना इससे प्रचलित हुई है। शाकाहार का समाज में प्रचलन हैं।

- समाज क्षेत्र में कला, चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्य कला, शिलालेखों का निर्माण हुआ है। लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियों में औषधालय, विद्यालय, महाविद्यालय, धर्मशालाएं आदि प्रवृत्तियों में योगदान किया है। जीवदया के भाव से प्राणी रक्षा में कर्तव्य निर्वाह किया है।
- जैन विद्या, वर्तमान में भगवान महावीर की वाणी है जो जैन आगमों में सुरक्षित है।
- भगवान महावीर तथा अन्य तीर्थंकरों ने इन्द्रियों, वासना, क्रोध और अहं को जीता, राग-द्वेष को जीतकर तटस्थ बने। अपनी जितेन्द्रियता के कारण वे जिन कहलाए। 'जिन' के अनुयायी जैन कहलाए।

-5 च ख, जवाहर नगर
जयपुर-302004 (राजस्थान)

प्राकृतिक चिकित्सा

मंजुला जैन

लाभप्रद है सूर्य चिकित्सा

अन्न का एक-एक कण सूर्य से प्राप्त शक्ति का परिणाम है। हर ज्वलनशील पदार्थ में सूर्य की शक्ति निहित है। हर शक्ति सूर्य पर निर्भर है। हवा को ही उदाहरण के लिए लें। सूर्य पृथ्वी को गर्म करता है, जिससे वहां की हवा गर्म होकर ऊपर उठती है और उस गर्म हवा में 100 वर्ग फुट क्षेत्र में 560 अश्व बल (हॉर्स पावर) की शक्ति विद्यमान होती है। पवन चक्कियां आदि हवा में संचित इसी शक्ति के बल पर चलती है। उसी के सहारे जल से बिजली बनती है। सूर्य रश्मियां जब खड़ी गिरती हैं तो प्रति वर्ग मीटर 1.5 अश्व बल के बराबर शक्ति आती है। इस पर भी कुछ शक्ति पृथ्वी के चारों ओर फैले वायुमंडलीय घेरे द्वारा रोक ली जाती हैं। धूप का हमारे जीवन में सर्वाधिक महत्व है।

धूप सेवन कब करें

सुबह जब धूप की किरणें बहुत ज्यादा तेज नहीं होती, उस समय इनका सेवन किया जाए तो विशेष लाभ होता है। धूप का सेवन उसी समय तक करना उचित है, जब तक शरीर उसे सहन करता रहे। धूप सहन न हो सकने की स्थिति में धूप में से तुरंत हट जाना चाहिए।

धूप-सेवन जहां तक हो सके नंगे बदन करना श्रेयस्कर है। जांघियां पहनकर बाकी शरीर नंगा रखें तो धूप का ज्यादा प्रभाव पड़ेगा। विटामिन डी भी सूर्य किरणों से तभी प्राप्त होता है, जब वे शरीर की त्वचा पर सीधी पड़े। यदि नंगे शरीर को धूप सेवन से ठंड महसूस हो तो बदन पर कोई बारीक कपड़ा ओढ़कर धूप-सेवन की जा सकती है। परन्तु ज्यादा मोटा कपड़ा शरीर पर लेकर धूप-सेवन न करें। इससे लाभ नहीं होता। महिलाएं शरीर पर कोई महीन कपड़ा लपेट कर किसी एकांत स्थान पर धूप-सेवन कर सकती हैं। धूप का सेवन बैठकर, लेटकर या टहलते हुए किया जा सकता है।

धूप-सेवन सर्दियों में ज्यादा लाभ पहुंचाता है। कारण सर्दियों में सूर्य की किरणें बहुत ज्यादा तेज नहीं होती। ज्यादा तेज किरणें शरीर को हानि पहुंचाती हैं। गर्मी में धूप-स्नान ज्यादा लाभ नहीं पहुंचाता। केवल सुबह के समय थोड़ी देर धूप शरीर पर ली जा सकती है।

सूर्य की ओर खुली आंखों से कभी न देखें, इस बात का विशेष ध्यान रखें। सूर्य की चमक आंखों को नुकसान पहुंचाती है। यदि सूर्य की ओर मुंह हो या तो आंखें बंद रखें या आंखों पर कोई कपड़ा लपेट लें। चाहें तो धूप का चश्मा (हरा या भूरा)) लगा लें। इससे सूर्य की ओर देखने से आंखों पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ता।

क्षय रोग

यह एक भयंकर रोग है जो बैक्टीरिया (कीटाणु) से फैलता है ये कीटाणु सांस द्वारा मनुष्य के शरीर में जाकर उसे रोगग्रस्त कर देते हैं। ये कीटाणु किसी मनुष्य को तभी घेरते हैं जब उसके शरीर की प्रतिरोधक क्षमता (रेजिसंस्टेंस पावर) क्षीण हो जाती है, तब शरीर की रक्षा करने वाले कीटाणु क्षय रोग के कीटाणुओं का मुकाबला करने में असमर्थ हो जाते हैं तो मनुष्य रोगग्रस्त हो जाता है। स्वस्थ शरीर का ये कीटाणु कुछ नहीं बिगाड़ पाते।

खून की कमी या दोष वाले रोगों में

पीलिया तथा खून की कमी वाले अन्य रोग जैसे एनिमिया, पिंडलियों में सूजन, दिल तेजी से धड़कना, शरीर का रंग पीला पड़ जाना, आंखें पीली पड़ जाना, हाथ-पैर ठंडे पड़ना, शरीर में दर्द, अशक्तता अनुभव आदि रोगों में भी धूप-सेवन काफी लाभप्रद होता है। इन रोगों में धूप-सेवन से रक्त में आई दूषिता दूर हो जाती है और रोग प्रतिरोधक क्षमता का संचय होता है।

हृदय रोगों में

हृदय के किसी भी रोग में धूप-सेवन हितकर है। हृदय रोगियों के लिए धूप, स्वच्छ हवा और पानी बहुत लाभ पहुंचाते हैं।

रिकेट (हड्डियों की अशक्तता)

इस रोग से धूप-सेवन से बहुत लाभ होता है। क्योंकि सूर्य किरणों में हड्डियों को मजबूती और ठोसपन प्रदान करने वाला विटामिन डी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। सूर्य की किरणें हीमोग्लोबिन तत्व की भी वृद्धि करने में अद्भुत कार्य करती है।

चर्म रोगों में

यदि शरीर पर कोई चर्म रोग या फोड़ा आदि हो जाए तो धूप सेवन से काफी लाभ मिलता है। चर्म रोग के कीटाणु धूप में नष्ट हो जाते हैं परन्तु इसके बाद गीली मिट्टी भी बांधनी चाहिए। धूप-सेवन से चर्म रोग ग्रस्त स्थान को किसी पतले कपड़े या हरी पत्तियों से ढक दें।

सिर दर्द और खांसी

सिर दर्द और खांसी में भी धूप-सेवन से काफी लाभ मिलता है। धूप-सेवन से कुछ समय पश्चात सिर पर गीली मिट्टी की पट्टी या जल की पट्टी अवश्य रखें। इससे सिर दर्द शीघ्र ठीक हो जाता है। खांसी में गर्म पानी का सेवन भी लाभप्रद रहता है।

जोड़ों के दर्द में

गठिया, वात, जोड़ों के दर्द में, गांठों तथा अन्य प्रकार के भीतरी-बाहरी घावों में धूप-सेवन बहुत लाभप्रद और असर करने वाला होता है। विविध रोगों में धूप-सेवन बहुत ही लाभदायक और जीवनदायिनी सिद्ध हुआ है।

पाथेय

आचार्य विजय नित्यानंद सूरि

प्रार्थना से जागता है आत्म-विश्वास

मनुष्य एक भावना शील प्राणी है। विचार, मन की हलचल तो पशु-पक्षियों में भी होती है, परन्तु उनमें भावना नाम का तत्व नहीं होता। भावना की तरह ही प्रार्थना भी मनुष्य के अंत:करण से उठने वाली शक्तिशाली निर्मल तरंग है। यह तरंग अनंत अंतरिक्ष को भेदती हुई सीधी ईश्वर, ईष्टदेव या जिसे आप पुकारना चाहते हैं, वहां तक पहुंचती है। प्रकाश किरणों व शब्द तरंगों से भी अधिक प्रचण्ड शक्ति है सच्चे हृदय से निकली हुई प्रार्थना की तरंगों में। आजकल के चिकित्सक लेसर किरणों से सिर की अत्यंत कोमल नाजुक नसों का ऑपरेशन कर देते हैं बिना चीर फाड़ के, बिना एक बूंद खून बहाए। उन शक्तिशाली लेसर किरणों से भी असंख्य गुनी शक्तिशाली है प्रार्थना की किरणें। जब एकाग्र तल्लीन हृदय से प्रार्थना की पवित्र तरंगें निकलती हैं तो आसपास के वातावरण में व्याप्त मलिनता, अशांति, भय, उद्वेग, चिंता, शोक, रोग आदि कलुषता को मिटाकर प्रेम, शांति, प्रसन्नता, विश्वास और पवित्रता को घनीभूत कर देती है। इसीलिए कहा जाता है- प्रार्थना परमेश्वर से वार्तालाप करने की एक आध्यात्मिक प्रणाली है। परम शक्ति के साथ संपर्क स्थापित करने की यदि कोई सरल और अचूक विधि मनुष्य के हाथ में है तो वह है प्रार्थना! ब्रह्मास्त्र की शक्ति अचूक शक्ति मानी जाती है, आज के युग में परमाणु बम की या मिसाइल की शक्ति समझ लें, परन्तु प्रार्थना की शक्ति उनसे भी असंख्य गुनी अचूक शक्ति है। यह एक हृदय से दूसरे हृदय को छूती है, अपने एक स्थान से हजार, लाख किलोमीटर दूर बैठे हृदय को भी स्पर्श करती है और अपना अचूक प्रभाव दिखाती है।

भावना का प्रययोजन है-''हम जैसे होना चाहते हैं, बनना चाहते हैं, अपने अंत:करण को जिस प्रकार के संस्कार में ढालना चाहते हैं उस प्रकार के वातावरण का निर्माण करना।'' हम जैसा होना चाहते हैं, वैसा चित्त संस्कार निर्माण करना। भावना स्वयं के प्रति स्वयं का चिंतन है। वस्तु के प्रति, संसार के प्रति हमारी चिंतन धारा का वह प्रवाह, जिस रूप में हम उसे देखते हैं या देखना चाहते हैं। जबकि प्रार्थना भावना से कुछ हटकर मन की एक कल्पना है, कामना है, पुकार है, पाने की इच्छा है।

भावना का क्षेत्र आंतरिक जगत है। बाह्य जगत को भी अंतरंग बनाकर मौन चिंतन करना भावना का विषय है। प्रार्थना का केन्द्र प्राय: बाहर में है। कभी परमात्मा को सम्बोधित कर उसे साक्षी मानकर हृदय की भावना उसके चरणों में प्रकट की जाती है। किसी अन्य जीवों के प्रति शुभकामना, सद्भावना का सम्प्रेषण किया जाता है। जिसे हम परावर्तित प्रार्थना-रिप्लेक्टिव प्रेयर कहते हैं। अंत:करण से निकली शुभ भावना जो दूसरों तक पहुंचकर वापस हमारे ही पास लौटकर आती है, उस प्रार्थना से हमारा अंत:करण भी पवित्र और उज्ज्वल बनता है।

प्रार्थना शब्द का अर्थ है-प्रकर्षेण अर्थ्यते-इति प्रार्थना तीव्रता पूर्वक चाहना। प्र+अर्थना=अर्थात् हृदय की असीम गहराई से, अंत:करण की श्रद्धा और विश्वास पूर्वक किसी से कुछ मांगना। मांगा जाता है उसी से जो अपने से अधिक परम शक्तिशाली होगा। मन से अनंत शक्तिशाली है आत्मा। आत्मा के भीतर अनंत शक्ति, असीम वैभव, अपार-संपदा और अनंत आनंद भरा है। प्रार्थना द्वारा हम उस आत्मा को जगाते हैं, आत्मा के भीतर स्पन्दन पैदा करते हैं इतनी शक्तिशाली तरंगे पैदा करते हैं जो वातावरण को बदल देती हैं। रोग को आरोग्य में, दु:ख को सुख में, द्वेष को प्रेम में, दरिद्रता को संपन्नता में परिवर्तित कर देती हैं।

प्रार्थना के शब्द जब मन से निकलते हैं तो अहंकार, पाप और दुर्बलता नष्ट हो जाती है। मनोविकार परिष्कृत हो जाते हैं। विकारग्रस्त हृदय वाला और दीन-दुर्बल मन वाला कभी प्रार्थना नहीं कर सकता। प्रार्थना वही कर सकता है, जिसके भीतर असीम आत्म-विश्वास हो, प्रबल इच्छा शक्ति हो, अपने से उच्च सत्ता के प्रति श्रद्धा हो, समर्पण हो और एक ऐसी प्रसवोन्मुख नारी जैसी तड़प हो, जो अपनी वेदना को भोगते हुए कुछ नया निर्माण करना चाहती है। जिसमें नई सर्जना की उमंग हो।

भावना में होने का संकल्प है। भावना स्वयं के प्रति स्वयं का संकल्प है, चिंतन है। भावना वस्तु को देखने की, अनुभव करने की एक दृष्टि है। प्रार्थना एक पिपासा है, जिसमें दूसरों के प्रति शुभकामना, सद्भावना की अभिव्यक्ति है। हम अपने से परम शक्तिशाली आत्म देवता या परमात्मा के समक्ष अपनी इच्छाएं व्यक्त करते हैं। स्वयं का अस्तित्व उसी में लीन करके, अहंकार का विसर्जन करके, स्वयं को उसी पराशक्ति के चरणों में समर्पित कर देते हैं।

प्रार्थना के क्षणों में हमारे हृदय का रोम-रोम बोलता है-

'शिवमस्तु सर्वजगत:' समस्त जगत का कल्याण हो, सबका भला हो।

'परहित-निरता भवन्तु भूतगणा:' सभी जीव, एक दूसरे की भलाई में लगें। परोपकार करें।

'दोषा: प्रयान्तु नाशं' हमारे, आपके सबके दोष, दुर्बुद्धि-रोग, शोक, चिंताएं, दूर हो जाएं।

'सर्वत्र सर्वे सुखिनो भवन्तु' सभी जीव सुखी हों। जो जहां हैं, वह वहां सुख में आनंद में रहें।

हृदय के अंतराल से उठने वाली यह भाव तरंग प्रार्थना है। उसे हम भावना भी कह सकते हैं, परन्तु वास्तव में एक शुभकामना है। सद्भावना है, जो हम अपने व समस्त विश्व के प्रति प्रकट करते हैं। इसमें हृदय के भीतर की उदात्त इच्छा है, इसलिए इसे प्रार्थना कहना अधिक उपयुक्त होता है। भावना से मन की वासना नष्ट होती है। आसक्ति टूटती है। प्रार्थना से अहंकार टूटता है। नम्रता का उद्भव होता है। इसका मतलब यह नहीं है कि प्रार्थना कोई याचना या भीख मांगना है। ईश्वर के समक्ष गिड़गिड़ाना है। दीन बनकर किसी के सामने हाथ फैलाने से कहीं भी कभी भी कुछ नहीं मिलता। जो कोई यह सोचता है कि बस, भगवान से प्रार्थना करो सब कुछ मिल जायेगा, वह बहुत बड़े भ्रम में हैं। जो बिना मेहनत किये मुफ्त का माल उड़ाने की फिराक में रहते हैं, उन्हें समझ लेना चाहिए कि ईश्वर इतना भोला-भाला या ओघड़ दानी नहीं है कि अपात्र को ही मुंह मांगी वस्तुएं देता जाए। दीनता या दरिद्रता दिखाना प्रार्थना नहीं है। अपनी दुर्बलता का रोना भी प्रार्थना नहीं है। सत्य तो यह है कि दीन या भिखारी प्रार्थना कर नहीं सकता। प्रार्थना में आत्म-विश्वास और इच्छाशक्ति लहराती है।

जीवन-प्रवाह

डॉ. भागरानी कालरा

जीवन शैली में बदलाव की संभावनाएं

एक कहावत है- बिना रोए तो मां भी दूध नहीं पिलाती। इस कहावत के अनुसार हमें बचपन से आदत डाली जाती है कि हम खूब खाएं पिएं, जरूरत पूरी न होने पर जिद करें, हाथ पैर पटकें, गुस्सा करें।

सिद्धार्थ की आयु पांच वर्ष की है। जब मां सहेलियों के साथ शापिंग करने जाती है, तब सिद्धार्थ को भी अपनी मनपसंद वस्तुएं खरीदने का मौका मिलता है। इनकार की हालत में वह सड़क के बीचों बीच सत्याग्रह करता है। बापू का मौन सत्याग्रह नहीं, वरना हाथ पैर पटक कर, ऐं ऐं की रोने की आवाज करते हुए वहीं लेट कर। उसका यह तरीका तब तक चलता है, जब तक मुंह मांगी वस्तु मिल नहीं जाती। घर में भी टीवी के सामने बैठ कर खाना खाता है। बर्तन वहीं पड़े रहते हैं। इच्छा होने पर वहीं लेट कर आराम करता है। आलस्यपूर्ण जीवन तथा दूसरों पर आधारित रहना उसकी जीवनशैली बन गयी है।

इसके विपरीत विनय को नियमानुसार आदेश पालन करना है। उसका सोना, उठना, जागना, पढ़ना सब घड़ी की सुई निर्धारित करती हैं। एक बार ज्वर से पीड़ित विनय बिस्तर पर आराम करने लगा कि पिताजी का आगमन हुआ। उन्होंने घड़ी देखी, विनय को उस समय स्टडी टेबल पर होना चाहिए था न कि बिस्तर पर। हुंकार भरी विनय स्टडी टेबल पर हाजिर होकर पढ़ने बैठ गया। उसकी जीवनशैली यंत्रवत है रोबोट जैसी। वह स्वयं फैसला नहीं कर सकता। पिता के आदेश कानों में गूंजते हैं।

जीवनशैली एक अमूर्त संज्ञा है। व्यक्ति का खान-पान, पहनावा, चाल-ढ़ाल, सोने का ढंग, आदतें, रुचि-इनसान, सब इस संज्ञा में समाहित हो जाते हैं। आनुवांशिकता तथा वातावरण जन्य दबाव इसे प्रभावित करते हैं। रमेश गरदन लटकाकर चलता है, महेश बतख की तरह चलता है, सोनिया मटक-मटक कर प्रदर्शन के ढंग से चलती है।

सोने के ढंग को देखें, रोहित हाथ पैर फैला कर सोता है मानों कोई नवाब हो। शौविक पेट के बल सोता है। और अनुज शरीर सिकोड़कर टेढ़ा सोता है। सुप्रसिद्ध मनोविश्लेषक एडलर के अनुसार प्रथम प्रकार की सोने की शैली आत्म प्रदर्शन प्रकट करती है। यह अपना बड़प्पन दिखाने का तरीका है। शैविक जिद्दी है तथा अनुज भीरू। अनुज से किसी भी प्रकार की आशा अपेक्षा रखना बेकार है।

खान-पान को लें-अपर्णा तथा सुवर्णा दोनों बहनें हैं। उनकी आयु क्रमशः पन्द्रह और सत्रह वर्ष है। दोनों को शारीरिक सौंदर्य में विशेष रुचि है। अपर्णा को समय, स्थान का ध्यान न रखते हुए सदैव कुछ न कुछ खाते रहने की आदत है, साधारण से कुछ ज्यादा खाती है। केक, चाकलेट, आइसक्रीम, काजू उसके प्रिय व्यंजन हैं। खाते समय वह सब कुछ भूल जाती है। टेलीफोन की घंटी बज रही हो तो बजती रहे उसे अपना व्यसन चालू रखना ही है। क्योंकि उसे अपने मोटापे से डर लगता है। अतः खाने-पीने के बाद मुंह में उंगलियां डाल कर उल्टी कर डालती है। वर्षों तक ऐसा करते रहने से उसके अग्रिम दांतों का एनेमल भी खराब हो गया है। मनोचिकित्सक इस आदत को 'बुलीमिया नर्वोसा' की संज्ञा देते हैं।

सुवर्णा का व्यवहार उसके बिलकुल विपरीत है। वह आधी चपाती भी खा लें तो उसे मुटापे का डर लगने लगता है। वह कुछ विशेष खाती ही नहीं। उल्टी कर डालना अत्याधिक व्यायाम और शरीर के एक-एक अंग को मापते रहना, पेट, कूल्हे टांगों का मुटापा मापना। उसके आत्म सम्मान का आधार शरीर का डील-डौल, आकार एवं वजन है। उम्र तथा ऊंचाई के अनुपात से वजन नहीं बढ़ रहा। चिकित्सा शास्त्र में इसे 'एनोरेक्सिया नर्वोसा' कहते हैं।

अपर्णा तथा सुवर्णा दोनों की जीवनशैली में आवश्यक परिवर्तन अपेक्षित है। राकेश डायबटीज का मरीज है। उसे व्यायाम करना, गिनी चुनी कैलोरीज लेने तथा चीनीयुक्त पदार्थों के खान-पान में कटौती करनी होगी।

इसी प्रकार मदिरा, धूम्रपान का आदी होना कुसमायोजित जीवनशैली है। मदिरापान एक खर्चीली आदत है जो पूरा पारिवारिक सुख समेट लेता है। धूम्रपान कैंसर का बीज होता है। इन आदतों का तात्कालिक असर नहीं यह केवल मेरी ही आदत नहीं अन्य भी कई मित्रों की है।, जब जो होगा देखा जाएगा, आज तो मौज मना लें, ऐसे उद्गार बचाव प्रयुक्तियों का प्रश्रय लेने के प्रयत्न हैं। बचाव प्रयुक्तियों का सहारा लेना अपने आप को धोखा देना है। प्रत्येक व्यक्ति का कुछ जीवन लक्ष्य होता है। लक्ष्य की प्राप्ति हेतु वह योजनाएं बनाता है, जिससे उसकी जीवनशैली का गठन होता है। यदि जीवन समग्रता से जिया जाए तो वही जीवन एक उत्सव बन जाता है। प्रतिकूल परिस्थितियों में भी संभल सकना एक सुंदर व्यक्तित्व का गठन है।

डॉ. जैफरी कोपलेनख एक अमेरिकन पब्लिक हेल्थ स्पेशियलिस्ट के अनुसार जीवनशैली में जब बदलाव शुरू करते हैं, तब वह गाड़ी में ब्रेक का काम करता है। उच्च रक्तचाप, हृदयरोग, डायबिटीज और कुछ हद तक कैंसर भी रुक सकता है। धूम्रपान छोड़ते ही धमनियों में रक्त प्रवाहित होता है। वर्षों की इस आदत से जो नुकसान हो चुका है, उसकी भरपाई नहीं हो सकती, परन्तु अचानक हार्ट अटैक पचास प्रतिशत रोका जा सकता है।

गुजराती की कहावत है, 'जाग्या त्यारे सवार', जब जागो तभी से सुबह का आरंभ है। हिंदी में भी कहते हैं, सुबह का भूला शाम को घर लौट आए तो उसे भूला नहीं कहते, जीवनशैली में सुधार की संभावना की ओर इंगित करते हैं।

-5, अरावली, कौशाम्बी, गाजियाबाद-201010 (उ.प्र.)

मानव का जीवन

मुनि तरुण सागरजी

● 10 साल के हो जाओ तो मां की उंगली पकड़कर चलना छोड़ दो। 20 साल के हो जाओ तो खिलौनों से खेलना छोड़ दो। 30 साल के हो जाओ तो आंखों को इधर-उधर घुमाना छोड़ दो। 40 साल के हो जाओ तो रात में खाना छोड़ दो। 50 साल के हो जाओ तो होटल में जाना छोड़ दो। 60 साल के हो जाओ तो व्यापार करना छोड़ दो। 70 साल के हो जाओ तो बिस्तर पर सोना छोड़ दो। 80 साल के हो जाओ तो लस्सी पीना छोड़ दो। 90 साल के हो जाओ तो और जीने की आशा छोड़ दो। 100 साल के हो जाओ तो दुनिया ही छोड़ दो।

● सोमवार से रविवार तक सात वार होते हैं। लेकिन यह तो सप्ताह के सात वार हुए। मैं एक आठवां वार भी बताता हूं, वह है-परिवार। 7 दिन मिलते हैं तो माह बनता है। 12 माह मिलते हैं तो साल बनता है। यही मेल मिलाप परिवार के साथ भी लागू होता है। भाई-बहन, सास-बहू, देवरानी-जेठानी जहां मिलते हैं वह परिवार होता है। आज परिवार का मतलब 'हम दो हमारे दो' रह गया है, इसमें मां-बाप नहीं आते।

● आज के आदमी की जिंदगी यंत्रवत चल रही है। सुबह 8 बजे का मतलब ब्रेक फास्ट, 2 बजे का मतलब लंच, रात-9-10 बजे डिनर और 12 बजे का मतलब बिस्तर। सोमवार का मतलब मीटिंग और ईंटिंग। मंगलवार का मतलब लेना और देना। बुधवार का मतलब काम और काम। गुरुवार का मतलब पेट भरो, पेटी भरो। शुक्रवार का मतलब पिओ और पीने दो। शनिवार का मतलब खूब खाना-खूब सोना और रविवार का मतलब बस! टीवी और बीबी। बाकी दुनिया...। यह जीने का सही ढंग तो न हुआ।

● 40 साल तक भले खाने के लिए जिएं मगर याद रखें कि 40 साल के बाद सिर्फ जीने के लिए खाएं। क्योंकि 40 साल के बाद बुढ़ापा शुरू हो जाता है। इसलिए 40 के बाद व्यक्ति को अपने यथार्थ और परमार्थ के लिए जीना शुरू कर देना चाहिए। किसी स्त्री के पति बन जाओ तो बचपन के सब खेल छोड़ दो, दादाजी बन जाओ तो दादागिरी छोड़ दो और परदादा बन जाओ तो दुनियादारी छोड़ दो।

● चार चीजें हैं जो कभी टिकती नहीं हैं। एक, फकीर के हाथ में धन। दो, चलनी में पानी। तीन, श्रावक का मन और चार, संत-मुनि के पैर। चार चीजें हैं जो कभी भरती नहीं है। एक-गांव का श्मशान। दो-लोभ का गड्ढा। तीन-पानी का समुद्र और चार-मनुष्य का मन। अंग्रेजी के दो शब्द हैं-

and और end
and का अर्थ और। थोड़ा है,
थोड़ा और चाहिए। जबकि
end का अर्थ है-बस!
अब और नहीं।
and संसार है और end संन्यास है।

स्वधर्मे निधनं श्रेयः

श्री आनंदमूर्ति

बहुत से लोग यह सोचते हैं कि धर्म का अर्थ हिन्दू धर्म, वैष्णव धर्म, शैव धर्म इत्यादि। परन्तु असल में यहां धर्म का अर्थ है—मानवीय धर्म, मानव धर्म।

गीता में एक श्लोक है—'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।' यानी स्वधर्म यदि गुणरहित भी हो और परधर्म को यदि बहुत ही आसानी से मानकर चलना संभव हो तो भी स्वधर्म में ही मृत्यु वांछनीय है। परधर्म तो बहुत की भयावह है। बहुत से लोग यह सोचते हैं कि धर्म का अर्थ हिन्दू धर्म, वैष्णव धर्म, शैव धर्म इत्यादि। परन्तु असल में यहां धर्म का अर्थ है—मानवीय धर्म, मानव धर्म।

सब यह जानते हैं कि धर्म का अर्थ है मूल विशेषता। ध्यान से देखा जाए तो हम समस्त सृष्ट जगत को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं। वह है—उद्भिज (वनस्पति) जगत, पशु जगत और मनुष्य जगत। उद्भिज् जगत के साथ पशुजगत का अनेक क्षेत्रों में मेल है और कहीं-कहीं बेमेल भी है। मुख्य अंतर यह है कि पशुजगत सचल है और पेड़-पौधे चल नहीं सकते। वैसे उद्भिज जगत में अनेक ऐसे पौधे हैं, जो बुद्धि के क्षेत्र में अनेक अनुन्नत पशुओं से श्रेष्ठ हैं, पर वे चल नहीं सकते। इस तरह पशु और उद्भिज जगत में भिन्नता यहां दीखती है यह कि उद्भिज पशु के समान चल नहीं सकते तथा समानता की दृष्टि से कि उद्भिज जगत में बौद्धिकता का मान समान नहीं है।

उसी तरह पशु जगत में भी बौद्धिकता का मान समान नहीं है। अनेक ऐसे उन्नत स्तर के पशु हैं, जो अवनत स्तर के मनुष्यों से उन्नत हैं। पशु और मनुष्यों में क्या अंतर है? मनुष्य में है धर्म—जिसे हम भागवत धर्म कहते हैं। कई लोग कहते आए हैं, या कहते हैं, अर्थात् मनुष्य एक युक्तिवादी विचारशील पशु है। मनुष्य को यदि हम विचारशील पशु की संज्ञा दें, तो पशु को भी तो चलमान उद्भिज कह सकते हैं। उद्भिज चल नहीं सकते यही उनका दोष है।

यदि हम पशु को चलमान उद्भिज कहेंगे तो मनुष्य को भी हम चलमान विचारशील उद्भिज कह सकेंगे, पर ऐसा तो नहीं है। मनुष्य उद्भिज भी नहीं है और पशु भी नहीं है। मनुष्य एक दूसरा ही जीव है। और 'जान' शरीर केन्द्रित है, इसी अर्थ में फारसी भाषा में 'वर' प्रत्यय लगाकर कहा जाता है 'जानवर' अर्थात जिसमें जान-प्राण है, और जो शरीर केन्द्रिक है। जिसके जान है मात्र अर्थ में फारसी भाषा में कहा जाता है 'जानदार'। मनुष्य, पशु व उद्भिज तीनों ही 'जानदार' हैं। किन्तु मनुष्य 'जानवर' नहीं है। मनुष्य में कुछ ऐसा है या स्वाभाविक धर्म है जो उद्भिज में है, पशु में भी है पर कुछ स्वाभाविक विशेष धर्म मनुष्य में है जो मनुष्य व पशुओं में है, पर उद्भिजों में नहीं है।

उसी तरह मनुष्य में कुछ ऐसी विशेषताएं हैं, जो मनुष्य में हैं और उद्भिज में नहीं। वे विशेष धर्म, विशेष गुण, मनुष्य को विशिष्ट बना देते हैं और यदि वे न रहें तो मनुष्य पशु के समान बन जाता है। किन्तु यदि कोई मनुष्य चलना-फिरना छोड़ दे, केवल बैठा रहे, सामर्थ्य है, पर काम करना चाहता भी नहीं, उसे हम मनुष्य नहीं कहेंगे, बल्कि कहेंगे मिस्टर उद्भिज, और जो मनुष्य धर्म पालन नहीं करता, उसे अवश्य ही मिस्टर जानवर कहा जाएगा।

सृष्टि विकास

पं. वागाराम परिहार

संतान प्राप्ति के दुर्लभ उपाय

वंशवृद्धि की बेल को आगे बढ़ाने, वृद्धावस्था में देखभाल एवं पुत्र के हाथों अंतिम संस्कार हेतु संतान सुख आवश्यक है। कुछ जातकों को शादी के कुछ समय पश्चात ही संतति सुख प्राप्त हो जाता है तो कोई आजीवन इस सुख से वंचित रहते हैं। विज्ञान की प्रगति के फलस्वरूप कुछ जातकों को कृत्रिम गर्भाधान भी संतान सुख देने में समर्थ बन जाता है। लेकिन प्रबल बाधा होने पर सुख मिलना असंभव ही रहता है।

ज्योतिष में पुत्र पंचम भाव जन्म कुंडली में संतान सुख का निर्धारण करता है। नवम भी पंचम से पंचम होने के कारण संतान सुख का कारण भाव है। ग्रहों में वृहस्पति को संतान कारक माना जाता है। संतान सुख हेतु पंचमेश एवं वृहस्पति का बलवान होना पंचम भाव पर शुभ ग्रहों का प्रभाव, नवम भाव एवं नवमेश पर शुभ ग्रहों का प्रभाव एवं इनका शुभ एवं बलि स्थिति से होना भी संतान सुख हेतु शुभ बनता है। लेकिन इन भावों एवं कारक ग्रहों पर पापग्रहों का प्रभाव कारको की नीच राशि एवं नीच नवांश में स्थिति षडबलहीन शत्रु राशि अस्तंगत स्थिति एवं अन्य किसी बाधक योग का होना संतान सुख में बाधा देता है। ऐसी स्थिति में इन बाधक कारकों की पहचान कर इनका उपाय करने से संतान सुख प्राप्त हो सकता है।

जिस प्रकार से दशा के प्रभाव के कारण संतान बाधा योग बनता है। उसी प्रकार इस बाधक योग के निस्तारण के लिए भी मनीषियों ने अनेक उपाय बताये हैं। बस प्रयोजन का अर्थ यह है कि कोई व्यक्ति संतान सुख से वंचित न हो। इसलिए पुरी आस्था, श्रद्धा एवं विश्वास के साथ इन उपायों को करने से ईश्वर कृपा से उस व्यक्ति को अवश्य ही संतान सुख की प्राप्ति संभव होती है।

शनि की अधिष्ठित राशि से छठे स्थान पर यदि चंद्र, बुध व सूर्य की दृष्टि हो व लग्न पर पापग्रह की दृष्टि हो या शनि की राशि में सूर्य हो तथा सूर्य पापग्रह के वर्ग में पापग्रह से दृष्ट होकर लग्नस्थ हो तो कुल देवता के दोष के कारण संतान में बाधा आती हैं। कुल देवता के दोष के कारण संतानहीनता पर कुल देवता की पूजा अर्चना विधि-विधान से नियमित कर पंचमेश व वृहस्पति को बलि बनाने से संतान सुख प्राप्त हो जाता है।

यदि पंचम भाव, पंचमेश व कारक वृहस्पति पर राहु का अशुभ प्रभाव हो तो सर्पहत्या जनित दोष के कारण संतान बाधा होती है। किसी दोष निवारण के लिए स्वर्ण निर्मित नागराज की मूर्ति की पूजा करें। किसी योग्य ब्राह्मण को गोदान, तिल दान करना चाहिए एवं वर्ष में एक बार सपेरे को पैसे देकर सर्प को जंगल में छोड़ना चाहिए।

यदि पितृकारक, सूर्य, सिंह राशि, दशम भाव व दशमेश पर पाप ग्रहों का प्रभाव हो एवं ये निर्बल हो त्रिक भावों में स्थित हो तो पितृशाप के कारण संतान बाधा होती है। इस बाधा को दूर करने के लिए पितृ दोष की शांति करवाए। गया श्राद्ध कर कन्यादान एवं गौ दान करना बाधा दूर कर संतान प्राप्ति करवाता है। सूर्यदेव को निरंतर अर्घ्य देकर ऊँ घृणि सूर्याय नमः का जाप करना चाहिए।

यदि मातृकारक चंद्र, कर्क राशि एवं चतुर्थ भाव पर पापग्रहों का प्रभाव हो कर्क राशि में मंगल राहु स्थित हो, चंद्र अपनी नीच राशि, नीच नवांश या त्रिक भावों में स्थित हो तो मातृ दोष के कारण संतान बाधा होती है। बाधा निवारण हेतु समुद्र तट पर स्नान कर गायत्री मंत्र का सवा लाख जाप एवं चांदी के पात्र में दूध सेवन बाधा दूर करता है।

यदि तृतीय भाव, तृतीयेश मंगल पर पाप प्रभाव होकर पंचम भाव व पंचमेश से किसी प्रकार संबंध बनाएं या तीनों त्रिक भावों में स्थित हो तो मातृशाप के कारण संतान बाधा होती है। ऐसी स्थिति में हरिवंश पुराण का श्रवण पीपल रोपण कर उसकी पूजा करने से बाधा दूर होकर संतान की प्राप्ति होती है।

पंचम भाव, पंचमेश व वृहस्पति पर बुध का अशुभ प्रभाव होने के कारण संतान बाधा हो तो मातुलशाप होता है। ऐसी स्थिति में विष्णु प्रतिमा स्थापित कर पूजा करना, कुआं, बावड़ी निर्माण एवं छात्रों को विद्यालयी सामग्री प्रदान दान करने से बाधा दूर होती है।

पंचमेश व नवमेश वृहस्पति होकर पाप ग्रहों के प्रभाव में त्रिक भाव में स्थित हो तो ब्राह्मण शाप के कारण संतान बाधा होती है। इसके निवारण हेतु कन्यादान, गरीब ब्राह्मण का सहयोग, स्वर्ण, पुखराज एवं पीले फलों का दान करने से बाधा दूर होती है। बुध, चंद्र व शुक्र बाधा दूर हो तो रुद्राभिषेक, वह बाधा कारक हो यंत्र-मंत्र एवं औषध प्रयोग सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु के लिए कुल देवता की पूजा करे।

संतान गोपाल मंत्र का जाप वह उसका विधिवत अनुष्ठान कराने से संतान सुख की प्राप्ति अवश्य होती है। संतान गोपाल मंत्र का प्रतिदिन धूपदीप एवं अगरबत्ती जलाते हुए भगवान श्रीकृष्ण का ध्यान करते हुए तीन या पांच माला का जाप करना चाहिए। संतान गोपाल मंत्र-

ऊँ देवकी सुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते।
देही मे तनयं कृष्णं त्वामहं शरणं गतः॥

संतान प्राप्ति के लिए गणपति उपासना भी लाभदायक मानी गयी है। बुध केतु के कारण जब संतान प्राप्ति में विलंब हो तो संतान गणपति स्तोत्र का पाठ परम लाभदायक बनता है। इसके लिए बुधवार से प्रारंभ कर प्रतिदिन धूपदीप जलाकर पूर्ण श्रद्धा एवं विश्वास के साथ संतान गणपति स्तोत्र का ग्यारह बार पाठ करना चाहिए।

संतान गणपति स्त्रोतम्
नमोस्तु गणनाथाय सिद्धिबुद्धियुताय च।
सर्वप्रदाय देवाय पुत्र वृद्धिप्रदाय च॥
गुरुदराय गुरवे गोप्त्रे गुहयासिताय ते।
गोप्याय गोपिताशेषभुवनाय चिदात्मने॥
विश्वमूलाय भव्याय विश्वसृष्टिकराय ते
नमो नमस्ते सत्याय सत्यपूर्णाय शुण्डिने
एकदन्ताय शुद्धाय सुमुखाय नमो नम
प्रपन्नजनपालाय प्रणतार्तिकविनाशिने
शरणं भव देवेश संतति सुदढा कुरू
भविष्यन्ति च ये पुत्रा मत्कुले गणनायक
ते सर्वे तव पूजार्थे निरता स्युर्वरो मत
पुत्रप्रदमिदं स्त्रोत सर्वसिद्ध प्रदायकम॥

उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में नींबू की जड़ शुभ समय में लाकर इसे स्त्री को गाय के दूध में मिलाकर पिलाए। इससे पुत्र संतान की प्राप्ति होती है।

जिस दिन स्वार्थसिद्धि योग हो एवं चंद्र का गोचर शुभ बन रहा हो। उस दिन एक बेदाग नींबू का पुरा रस निचोड़ ले। इसमें थोड़ा सा नमक मिलाए। इसके पश्चात कुछ समय के लिए इसे लड्डू गोपाल के आगे रख दें। रात को संगम से पूर्व स्त्री इसे पी लें तो लड्डू गोपाल की कृपा से अवश्य संतान की प्राप्ति होगी।

तारांचद आहूजा

जीवन का अंतिम सत्य मृत्यु

इस संसार में सभी कुछ परवर्तनशील है। इस समय जो कुछ है, उसमें अगले क्षण ही कुछ भी परवर्तन हो सकता है। एक निर्धन व्यक्ति धनवान हो सकता है और एक अत्यंत धनवान व्यक्ति निर्धन हो सकता है। एक पूर्ण स्वस्थ व्यक्ति की अचानक मृत्यु हो सकती है और मरणासन्न व्यक्ति भी लम्बे समय तक जीवित रह सकता है, किन्तु अन्ततोगत्वा उसकी भी मृत्यु होती हैं देश, काल, बुद्धि-चातुर्य आदि से किन्हीं भी स्थितियों को बदला भी जा सकता है, किन्तु जीवन का अंतिम सत्य है मृत्यु, उसे टाला नहीं जा सकता है, वह तो अवश्यम्भावी है।

ईश्वरीय विधान में जन्म के साथ मृत्यु का अनिवार्य योग निश्चित है। महापुरुषों का कहना है कि मृत्यु की भी उपयोगिता है और ईश्वर ने मृत्यु का विधान रचकर प्राणिमात्र पर बड़ा उपकार किया है। कल्पना कीजिए कि यदि मृत्यु का विधान नहीं होता तो अब तक पृथ्वी पर जीवों की कितनी अधिक संख्या हो गई होती। उन सबका पेट कैसे भरता और वे कहां पर रहते। दूसरी बात यह है कि शरीर जब वृद्धावस्था में पहुंच जाता है तो वह जर्जर हो जाता है और अनेक प्रकार के रोग भी लग जाते हैं। तब प्राणी कष्ट पाता है और सर्वेश्वर से प्रार्थना करता है कि वह उसे किसी प्रकार इस शरीर से छुटकारा प्रदान कर दे ताकि उसके दु:खों का अंत हो जाए। कहने का तात्पर्य है कि जीवन में एक समय ऐसा आता है जब मृत्यु मनुष्य की सबसे बड़ी और प्रिय मांग बन जाती है।

संत-मनीषियों का कथन है कि यदि मनुष्य को मृत्यु का भय नहीं रहा होता तो वह कभी बुरे कार्यों से बचने का प्रयास ही नहीं करता, उसके पाप पराकाष्ठा तक पहुंच जाते, वह ईश्वर के प्रति भक्ति भावना नहीं रखता। वह सदैव यही सोचता कि मैं तो मृत्यु से परे हूं, अमर हूं, मैं असीमित वर्षों तक जो भी चाहूं करता रह सकता हूं। मृत्यु का भय भी उसे दुष्कर्मों की ओर जाने से रोकता है, न जाने कब मृत्यु आ जाए इस चिंतन के कारण अच्छे कार्यों को करने के लिए व्यक्ति प्रवृत्त होता है। कल्पना कीजिए कि मृत्यु के भय होने पर भी जगत में इतना आतंक, भ्रष्टाचार, अनाचार, दुराचार, हिंसा, बलात्कार आदि बुराइयां व्याप्त हैं तो इस भय के अभाव में इस संसार की क्या दशा होती।

गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि मृत्यु तो शरीर की होती है, आत्मा की नहीं। आत्मा तो अमर-अजर है, सनातन और पुरातन है और शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता। विधाता द्वारा निश्चित समय पर आत्मा एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर को धारण करती है। शरीर की मृत्यु तो एक पड़ाव है। जिस प्रकार मनुष्य पुराने वस्त्र को त्यागकर नये वस्त्रों को ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार जीवात्मा भी पुराने शरीर को त्यागकर नये शरीर को प्राप्त होता है।

संत-महात्मा कहते हैं कि आत्मा की अमरता को ध्यान में रखते हुए मनुष्य को मृत्यु पर शोक नहीं करना चाहिए। शोक करने से दिवंगत आत्मा को तो कष्ट पहुंचता ही है, शोकाकुल व्यक्ति को भी कोई राहत नहीं मिलती। वस्तुत: मृतक के परिजन अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर रुदन करते हैं अन्यथा संसार में कितने लोग रोज मृत्यु को प्राप्त होते हैं उन पर कोई दूसरा आंसू नहीं बहाता। कर्मों के कारण हम एक दूसरे से जुड़े हैं और कर्मों का लेखा-जोखा, हिसाब-किताब व लेन-देन पूरा हो जाने पर हम सब रिश्ते-नाते तोड़कर संसार से कूचकर जाते हैं। इस प्रकार हमारा जन्म जहां संबंधों को जोड़ता है वहीं मृत्यु संबंधों को तोड़ने का कार्य करती है। अज्ञानवश व्यक्ति अपने संबंधों को शाश्वत मान लेता है और उनके टूटने पर शोकग्रस्त हो जाता है। धर्मग्रंथों के अनुसार हमारे अनेक जन्म हो चुके हैं जो हमें याद नहीं है। गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि- हे अर्जुन! मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं। उन सबको तू नहीं जानता, किन्तु मैं जानता हूं-

बहूनि मे व्यातीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप॥ (4/5)

कवि रविन्द्रनाथ टैगोर लिखते हैं कि मृत्यु तो एक मीठी नींद है। जैसे नींद के समय आदमी सब कुछ भूल जाता है, वैसे मृत्यु के समय भी आदमी सब कुछ भूल जाता है। सोते समय यह ध्यान रहता है कि सुबह जब हम उठेंगे तो हमें हमारी बनी-बनाई दुनिया मिल जाएगी, किन्तु मृत्यु के समय यह विचार रहता है कि हमारा सब कुछ छूट जाएगा। इसलिए लोग अपनी बनायी दुनिया के छूटने से, धन-दौलत-सत्ता के छूटने से, पुत्र-पौत्रादि के छूटने से और जिस शरीर में मैं-मेरा है, उस शरीर के छूटने से दु:खी होते हैं। परन्तु यह चिंतन शास्त्रसम्मत एवं उचित नहीं है। एक दिन तो इन सब चीजों को छूटना ही है जो हमें पहले से ही मालूम था। फिर दु:ख और मनोमालिन्य कैसा? ज्ञानीजनों का कहना है कि हमारा चिंतन यह होना चाहिए कि मृत्यु के पश्चात जब हमारी शवयात्रा निकले तो उसमें बड़ी संख्या में ऐसे लोग हों जो हमारी सेवाओं और सत्कर्मों का स्मरण करें और यदि उनके मन में शोक हो तो हमारी यह मृत्यु एक श्रेष्ठ मृत्यु ही कहलायेगी।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो व्यक्ति अंत समय मेरा स्मरण करता है वह मेरे परमधाम को जाता है। वह फिर लौटकर इस संसार-सागर में नहीं आता, उसका जन्म-मरण का फेरा सदा-सर्वदा के लिए समाप्त हो जाता है। विचार कीजिए कि यदि मृत्यु का विधान नहीं होता तो जीवात्मा को परमात्मा का परमधाम कैसे नसीब होता। यह उस करुणावरुणालय ईश्वर की कृपा नहीं तो और क्या है। इसलिए मृत्यु चिन्ता, दु:ख और विषाद का विषय नहीं है अपितु यह तो आनन्द व हर्षोल्लास का अवसर है जैसा कि कबीरदासजी कहते हैं-

जिस मरने से जग डरे, मेरे मरण आनन्द।
मरने से ही पाई हों, पूरण परमानन्द॥

-निदेशक धार्मिक पुस्तकालय
4/114, एस.एफ.एस, अग्रवाल फार्म
मानसरोवर, जयपुर-302020 (राजस्थान)

डॉ. टी. डी. शर्मा

'श्रीयंत्र' महामेरु : महाशक्ति का प्रतीक

रेवा का उद्गम स्थल अमरकंटक (आम्रकूट) मध्यप्रदेश के सांस्कृतिक, धार्मिक एवं ऐतिहासिक गौरव का प्रतीक है। इसी तपोभूमि में बसे तपस्वी दक्षिणामूर्ति सम्प्रदाय के स्वामी शुकदेवानंदजी द्वारा अपने गुरुदेव श्री विद्याआश्रमजी के आदेश एवं मां ललिता त्रिपुर सुंदरी की प्रेरणा से भारतवर्ष के मध्य में स्थित, पुराणों में वर्णित सलिला के नर्मदा उद्गम स्थल अमरकंटक में 'श्री यंत्र महामेरु' मंदिर जन आस्था का केन्द्र बना हुआ है।

स्वरूप

महर्षि अगस्त्य द्वारा उपदिष्ट मंदिर विज्ञान से संरचित श्री यंत्र महामेरु मंदिर का आधार पद्म बंध पर है। शास्त्रों के अनुसार 'पद्म' का अर्थ ज्ञान होता है, अतः समूचे ज्ञान के आधार पर निर्मित मंदिर की कल्पना अनूठी है।

दूसरा नींव के सर्पबंध वाला भाग है। समूचे मंदिर के नींव से ऊपरी अधिष्ठान क्षेत्र को दो भारी-भरकम विषधरों से अंगीकृत करते हुए दर्शाया गया है तथा मंदिर के पृष्ठ भाग में दोनों विषधरों को गुम्फित अवस्था में बताया गया है। मंदिर के प्रवेश द्वार की सीढ़ी के दोनों तरफ फनधारी विषधरों का आकर्षक निर्माण किया गया है। नागबंध को तांत्रिक शास्त्रों में कुंडलिनी शक्ति का द्योतक बताया गया है, जिसका वास्तुकला की दृष्टि से उत्तम निर्माण जन-जन को आकर्षित करता है।

ऊपरवाला भाग मंदिर का देवबंध वाला भाग है। देवबंध वाले हिस्से में काल नृत्य का भव्य प्रदर्शन किया गया है, जिससे वास्तुकला का अनुपम व रोमांचकारी चित्रण परिलक्षित होता है। काल नृत्य में सत्रह तत्वों का समावेश किया गया है। काल नृत्य के स्वरूप की कल्पना की गयी है, उसके अनुसार 'श्री यंत्र मंदिर' के चारों कोणों पर सिंह के अत्यंत बलशाली हाथ बनाये गये हैं। उसके पंजों में फंसी गोलाकार वस्तु को जीव माना गया है, जिसका आध्यात्मिक व दर्शन शास्त्र के अनुसार मनुष्य क्रिया और काल के बीच फंसकर रहने को इंगित करता है।

गर्भगृह

गर्भगृह में भगवती आदिशक्ति श्री महात्रिपुर सुंदरी की अष्टधातु की डेढ़ टन वजन की 62 इंच ऊंची प्रतिमा स्थापित की गई है। शास्त्रोक्त विधि से निर्मित अद्वितीय प्रतिमा का निर्माण दक्षिण भारत के कंबकंब के समीप मलई ग्राम में किया गया है। गर्भगृह में चारों तरफ अत्यंत करीने से काटकर बारीक कांच मढ़े गये हैं, जहां मात्र दिये की रोशनी से समूचा गर्भगृह प्रकाशपुंज से सराबोर हो जाता है।

शीर्षभाग

श्री यंत्र मंदिर के शीर्ष भाग में दसों अवयवों को अत्यंत कठिनता से बनाया गया प्रतीत होता है। श्री यंत्र के बीचोंबीच बिन्दु व सबसे बाहर भुपूर को दर्शाया गया है। दसों प्रकार के अवयवों में बिन्दु, त्रिकोण, अष्टकोण अंतर्दशार, बहिर्दशार, चतुर्दशार, अष्टदल, षोडषदल, तीन वृत्त और भुपूर का अत्यंत सूक्ष्मता से अंकन किया गया है। इस यंत्र में 43 त्रिकोण, 28 मर्मस्थान और 24 संधियों को दर्शाया गया है। मंदिर के शीर्ष भाग में श्री यंत्र के चार ऊर्ध्वमुख त्रिकोण, पांच अधोमुख त्रिकोण का अंकन किया गया है। मंदिर के ऊपरी हिस्से का निर्माण राजस्थान के जालौर से मंगाये लाल ग्रेनाइट से किया गया है।

मंदिर का मूलद्वार पश्चिम की ओर है। चारों दिशाओं में भगवान शंकर, गणेश, दक्षिणामुखी हनुमान एवं भैरव के मंदिर की स्थापना के अलावा 108 शक्तिपीठ की स्थापना की गई है। मंदिर के चारों तरफ 'महाशक्ति मंडल' के नाम से मंदिरों का समूह है। चारों दिशाओं में मंडलाकार शक्ति मंडल में शक्तिपीठ की अधिष्ठात्री देवियों की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। प्रथम प्रकोष्ठ के अंतरंग पट्ट पर सवा लाख 'श्री यंत्र' प्रतिष्ठित है, जिससे इस मंदिर का वातावरण हमेशा 'श्रीमय' (लक्ष्मी, सरस्वती, ब्रह्माणी तीनों लोकों की संपत्ति एवं शोभा का ही नाम 'श्री' है) प्रतीत होता है।

भव्य प्रवेश द्वार

'श्री यंत्र महामेरु मंदिर' का प्रधान प्रवेश द्वार पूर्व की ओर, मंदिर के पृष्ठ भाग की ओर बनाया गया है। मुख्य द्वार के ऊपरी हिस्से में पूर्व की ओर मां लक्ष्मी, उत्तर की ओर मां सरस्वती, पश्चिम की ओर मां भुनेश्वरी और दक्षिण की ओर मां काली की भव्य प्रतिमाएं स्थापित की गयी हैं। प्रमुख द्वार में चारों देवियों के 64 विग्रह एवं प्रत्येक देवियों के सोलह-सोलह स्वरूपों का भव्य अंकन किया गया है। इस द्वार पर भगवान गणेश और कार्तिकेय की प्रतिमा का निर्माण किया गया है।

श्री चक्र

'श्री' विद्या के यंत्र को 'श्री चक्र' कहते हैं। इसमें जो 'श्री' शब्द आया है, वह विद्या का वाचक है और 'चक्र' शब्द चक्र स्वरूप यंत्र का, केवल वही ऐसा चक्र है, जो समस्त ब्रह्मांड का प्रतीक है। यह प्रणवस्वरूप शब्द ब्रह्म का ही प्रतीक है। वह परब्रह्मत्व रूपिणी आदि प्रकृतिमयी श्री विद्या रूप महात्रिपुर सुंदरी का आराधना स्थल है। यह उनका दिव्य धाम है, दिव्य रूप है। इसका सन्निवेश मनोहर है। इसमें समस्त देवताओं की आराधना और सभी प्रकार की उपासनाएं होती हैं।

तंत्र शास्त्र में भगवती त्रिपुर सुंदरी का महत्व सर्वोपरि बताया गया है। ब्रह्मांड पुराण में कहा गया है कि जिसने अनेक जन्मों में अति अधिक साधना की हो, उसी को 'श्री विद्या' की उपासना का सौभाग्य प्राप्त होता है। 'श्री यंत्र' उस महाशक्ति का प्रतीक है, जो वैभव संपदा की अधिष्ठात्री लक्ष्मी के रूप में विख्यात है। श्री यंत्र के द्वारा निराकार ईश्वर की साकार लीला का क्रम इस विशाल ब्रह्मांड में तथा इस पिंडांड रूपी मनुष्य शरीर में अच्छी प्रकार से दर्शाया गया है।

–क्रांतिनगर, बिलासपुर-495004 (म.प्र.)

चिंतन

आचार्य श्री विद्यासागर

आकुल–विकल हो जाना ही हिंसा है

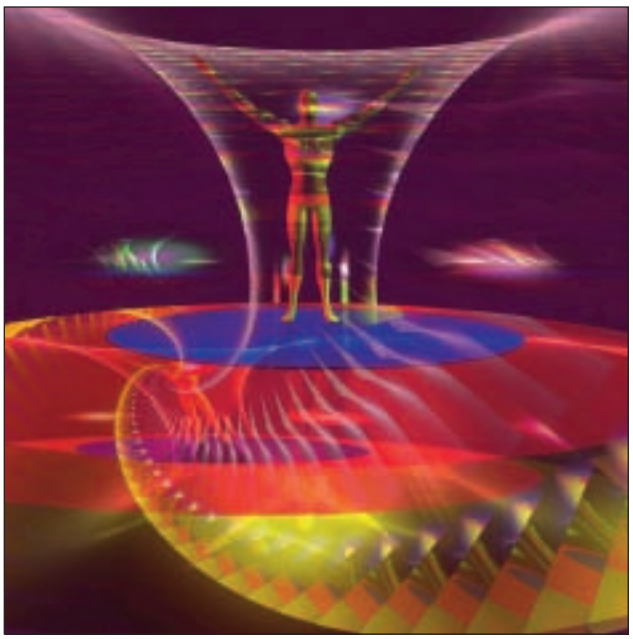

प्रत्येक व्यक्ति शांति चाहता है। जीवन जीना चाहता है। सुख की इच्छा रखता है और दुख से भयभीत है। दुख निवृत्ति के उपाय में अहर्निश प्रयत्नवान है लेकिन वास्तविक सुख क्या है, इसकी जानकारी नहीं होने से तात्कालिक भौतिक सुख को पाने में लगा हुआ है। इसी में अनंतकाल खो चुका है। भगवान महावीर ने जो अहिंसा का उपदेश दिया है वह अनंत-सुख की इच्छा रखने वाले के लिए दिया है। उस अहिंसा का दर्शन करना, उसके स्वरूप को समझना भी आज के व्यस्त जीवन में आसान नहीं है।

यह जो आकुलता है, यह जो अशांति है, यह अशांति ही आपको अहिंसा से दूर रखती है। आकुलता होना ही हिंसा है। दूसरों को पीड़ा देना भी हिंसा है लेकिन यह अधूरी परिभाषा है। इस हिंसा के त्याग से जो अहिंसा आती है वह भी अधूरी है। वास्तव में जब तक आत्मा से रागद्वेष समाप्त नहीं होते, तब तक अहिंसा प्रकट नहीं होती।

अहिंसा की परिभाषा के रूप में महावीर ने संदेश दिया है कि 'जीओ और जीने दो।' 'जीओ' पहले रखा और 'जीने दो' बाद में रखा है। जो ठीक से जीयेगा वही जीने देगा। जीना प्रथम है तो किस तरह जीना है यह भी सोचना होगा। वास्तविक जीना तो रागद्वेष से मुक्त होकर जीना है। यही अहिंसा की सर्वोत्तम उपलब्धि है। सुना है विदेशों में भारत की तुलना में हत्याएं कम होती हैं लेकिन आत्महत्याएं अधिक हुआ करती हैं, जो अधिक खतरनाक चीज है। स्वयं अपना जीना ही जिसे पसंद नहीं है, जो स्वयं के जीने को पसंद नहीं करता, जो स्वयं के जीवन के लिए सुरक्षा नहीं देता वह सबसे अधिक खतरनाक साबित होता है। उससे क्रूर और निर्दयी और कोई नहीं है। वह दुनिया में शांति देखना पसंद नहीं करेगा।

शांति के अनुभव के साथ जो जीवन है उसका महत्व नहीं जानना ही हिंसा का पोषण है। आकुल-विकल हो जाना ही हिंसा है। रात-दिन बेचैनी का अनुभव करना, यही हिंसा है। तब ऐसी स्थिति में जो भी मन, वचन, काय की चेष्टाएं होंगी उनका प्रभाव दूसरे पर भी पड़ेगा और फलस्वरूप द्रव्य-हिंसा बाह्य में घटित होगी। द्रव्य-हिंसा और भाव-हिंसा, ये दो प्रकार की हिंसा हैं। द्रव्य-हिंसा में दूसरे की हिंसा हो भी सकती है, नहीं भी हो सकती है किन्तु भाव-हिंसा के माध्यम से अपनी आत्मा का विनाश अवश्य होता है और उसका प्रभाव भी पूरे विश्व पर पड़ता है। स्वयं को पीड़ा में डालने वाला यह न सोचे कि उसने मात्र अपना घात किया है, उसने आस-पास सारे विश्व को भी दूषित किया है।

प्रत्येक धर्म में अहिंसा की उपासना पर जोर दिया गया है। किन्तु भगवान महावीर का संदेश अहिंसा को लेकर बहुत गहरा है। वे कहते हैं कि प्राण दूसरे के ही नहीं अपने भी हैं। हिंसा के द्वारा दूसरे के प्राणों का घात हो ही, ऐसा नहीं है, पर अपने प्राणों का विघटन अवश्य होता है। दूसरों के प्राणों का विघटन बाद में होगा, पर हिंसा के भाव मात्र से अपने प्राणों का विघटन पहले होगा। अपने प्राणों का विघटन होना ही वस्तुतः हिंसा है। जो हिंसा का ऐसा सत्य-स्वरूप जानेगा वही अहिंसा को प्राप्त कर सकेगा।

'बिन जाने तैं दोष गुणन को कैसे तजिये गहिये'–गुण और दोष का सही-सही निर्णय जब तक हम नहीं कर पायेंगे तब तक गुणों का ग्रहण और दोषों का निवारण नहीं हो सकेगा। आज तक हम लोगों ने अहिंसा को चाहा तो है लेकिन वास्तव में आत्मा की सुरक्षा नहीं की है। आत्मा की सुरक्षा तब हो सकती है जब भाव-हिंसा से हमारा जीवन बिल्कुल निवृत्त हो जाए। भाव-हिंसा के हटते ही जो अहिंसा हमारे भीतर आयेगी उसकी महक, उसकी खुशबू बाहर-भीतर सब ओर बिखरने लगेगी।

जो व्यक्ति राग करता है या द्वेष करता है और अपनी आत्मा में आकुलता उत्पन्न कर लेता है वह व्यक्ति संसार के बंधन में बंध जाता है और निरंतर दुख पाता है। इतना ही नहीं, जो व्यक्ति स्वयं बंधन को प्राप्त करेगा और बंधन में पड़कर दुखी होगा, उसका प्रतिबिम्ब दूसरे पर पड़े बिना नहीं रहेगा, वह वातावरण को भी दुखमय बनायेगा। एक मछली कूएं में गिर जावे तो उस सारे जल को गंदा बना देती हैं।

एक व्यक्ति रोता है तो वह दूसरे को भी रूलाता है। एक व्यक्ति हंसता है तो दूसरा भी हंसने लगता है। फूल को देखकर बच्चा बहुत देर तक रो नहीं सकता। फूल हाथ में आते ही वह रोता-रोता भी खिल जायेगा, हंसने लगेगा और सभी को हंसा देगा। हंसाये ही यह नियम नहीं है किन्तु प्रभावित अवश्य करेगा। आप कह सकते हैं कि कोई अकेला रो रहा हो तो किसी दूसरे को क्या दिक्कत हो सकती है। किन्तु आचार्य उमास्वामी कहते हैं कि शोक करना, आलस्य करना, दीनता अभिव्यक्त करना, सामने वाले व्यक्ति पर प्रभाव डाले बिना नहीं रहते।

आप बैठकर शांति से दत्तचित्त होकर भोजन कर रहे हैं। किसी प्रकार का विकारी भाव आपके मन में नहीं है। ऐसे समय में यदि आपके सामने कोई बहुत भूखा व्यक्ति रोटी मांगने गिड़गिड़ाता हुआ आ जाता है तो आप में परिवर्तन आये बिना नहीं रहेगा। उसका रोना आपके ऊपर प्रभाव डालता है। आप भी दुखी हो जाते हैं और यह असातावेदनीय कर्म के बंध के लिए कारण बन सकता है।

इसलिए ऐसा मत समझिये कि हम राग कर रहे हैं, द्वेष कर रहे हैं तो अपने आप में तड़प रहे हैं, दूसरे के लिए क्या कर रहे हैं? हमारे भावों का दूसरे पर भी प्रभाव पड़ता है। हिंसा का संपादनकर्ता हमारा रागद्वेष परिणाम है। शारीरिक गुणों का घात करना द्रव्य हिंसा है और आध्यात्मिक गुणों का घात करना, उसमें व्यवधान डालना भाव-हिंसा है। वह 'स्व', 'पर' दोनों की हो सकती है।

स्त्रियां पुरुषों से तीन गुना अधिक बोलती हैं

योगी अनूप

आज का विज्ञान भी पुरानी कहावत के इस सत्य को स्वीकार करने लगा है कि स्त्रियां ज्यादा बोलती है अपेक्षाकृत पुरुषों के। केलीफोर्निया यूनिवर्सिटी के डॉक्टर लाओन ने अपनी पुस्तक स्त्री मस्तिष्क में कहा कि स्त्रियां पूरे दिन में 20000 शब्द बोलती हैं जबकि एक आदमी 7000 शब्द बोलता है। उन्होंने स्त्रियों के मस्तिष्क को अंग्रेजी में ए लीन मीन एन्ड कम्नयूकेशन मशीन कहा। हालांकि इस प्रकार का मस्तिष्क प्रचार प्रसार के लिए बहुत ही उपयोगी होता है।

संभवत: यही कारण है कि चालाक धार्मिक गुरुओं ने अपने प्रचार के लिए स्त्रियों का अधिक उपयोग किया। हिन्दुस्तान में तो धर्म प्रचार के लिए केवल स्त्री को ही जिम्मेदार माना जा सकता है। किसी भी धार्मिक व्याख्यानों में स्त्रियों की सम्मिलित संख्या सर्वाधिक देखने को मिलती है। धार्मिक तथा कर्मकाण्ड के कार्यों में इनकी रुचि गहन होती है। मंदिर तो 90 फीसदी माताओं के बदौलत ही चलता है। पर मेरे आध्यात्मिक अनुभव डॉक्टर लाओन से पूर्णरूपेण सहमति नहीं रखते। स्त्रियां पुरुषों की अपेक्षाकृत अधिक बोलती अवश्य हैं किन्तु पुरुष भी किसी प्रकार से कम नहीं है। राजनेता व धार्मिक प्रवचनी इत्यादि क्या कम बोलते दिखते हैं। इन दोनों वर्गों में पुरुषों का ही बोलबाला सदा से रहा है। यहां तक कि इस पुरुष प्रधान समाज ने स्त्रियों को स्त्री रूप में कभी न मुक्ति मिलने का फरमान भी जारी कर दिया गया। फिर भी उसने सेवा भाव न त्यागा और उन्हीं फरमान जारी करने वाले लोगों की सेवा करती रही। यहां पर कौन बुरा है कौन अच्छा है यह चर्चा का विषय नहीं है बल्कि आवश्यकता अधिक से बोलने पर क्या नुकसान उठाना पड़ सकता है इस पर विचार करेंगे।

आध्यात्मिक दृष्टि से देखने पर मैंने यह पाया कि आवश्यकता से अधिक बोलने वाले लोग ज्यादातर आधारहीन विषयों पर चर्चा करते हैं। या यूं कहें कि वे झूठ का सहारा ज्यादा लेते हैं। राई का पहाड़ तो आसानी से बना दिया जाता है। किसी भी शब्द को आसानी से अफवाह रूप में परिवर्तित कर देना उनके लिए बहुत सरल होता है। बिल्कुल वैसे ही जैसे आज का इलेक्ट्रोनिक मीडिया। इस प्रकार निरन्तर बोलने वाला मस्तिष्क चंचल किस्म का तथा अविश्वसनीय माना जाता है। ऐसा मन किसी एक विषय पर गहनतापूर्वक नहीं ठहरता है जिसके कारण मस्तिष्क में प्राण ऊर्जा की कमी हो जाती है। गले की ग्रंथियां भी अस्वाभाविक हो जाती हैं। इस कमी की आपूर्ति के लिए उसे कुछ इन्द्रियों का सहारा लेना पड़ता है। जैसे जननेन्द्रिय और स्वादेन्द्रिय प्रमुख है। जननेन्द्रिय में मैथुन क्रिया तथा स्वादेन्द्रिय में अधिक चटपटे व मसालेदार भोजन का सहारा लेते हैं। ध्यान दें मैथुन तथा चटपटे व मसालेदार भोजन मस्तिष्क को थोड़ी देर के लिए तनावरहित कर देते हैं।

किन्तु मस्तिष्क को तनावरहित करने का यह विकल्प व्यक्ति को शारीरिक तथा मानसिक रूप से स्थायी शांति नहीं दे सकता है। सही विकल्प तो अपने स्वभाव को ठीक कर लेना तथा प्राण के संचार को मस्तिष्क में बढ़ा लेना ही हो सकता है जो प्राणायाम तथा ध्यान ही कर सकता है।

पूजा घर का महत्व

मुरली कांठेड़

● पलंग को शयनकक्ष की दीवारों से थोड़ा हटाकर रखना चाहिए। दीवार के साथ पलंग मिलाने से नींद ठीक नहीं आएगी।

● तिजोरी को शयनकक्ष में रखने से बचें। यदि रखनी ही पड़े तो शयनकक्ष के दक्षिणी भाग में इस तरह रखें कि खोलने पर उत्तर दिशा में सीधी दृष्टि पड़े इससे तिजोरी भरी रहेगी।

● शयनकक्ष का द्वार एक पल्ले का ही लगवाएं। इससे पति-पत्नी के विचारों में एकरूपता रहेगी।

● सोते समय सिर सदैव दक्षिण में रखें। यदि पश्चिम दिशा में हो तो पलंग का एक सिरा दक्षिण की दीवार से लगा होना चाहिए। उत्तर तथा पूर्व में सिर नहीं होना चाहिए। पूर्व का सिराहना वृद्धजनों के लिए उपयुक्त होता है, जो आध्यात्मिक चिंतन में रुचि जाग्रत करता है।

● बच्चों, अविवाहितों, मेहमानों को पूर्व दिशा के कमरों में सुलाना चाहिए। विवाहित जोड़े को इस कमरे में नहीं सोना चाहिए।

● शयनकक्ष में पूजाघर नहीं होना चाहिए। यदि पूजाघर के लिए घर में कोई अन्य स्थान न हो, तो ईशान कोण की तरफ बनाना चाहिए। रात को सोते समय पूजाघर के बाहर पर्दा अवश्य लगाएं।

● घर एक से अधिक मंजिल का हो तो गृहस्वामी का कक्ष ऊपर की मंजिल में ही होनी चाहिए। इससे पुत्र वश में रहते हैं। घर में उसका दबदबा रहता है।

● शयनकक्ष में प्रेरक व रमणीय चित्र लगाने चाहिए। हिंसक पशुओं व युद्ध के चित्र लगाने से मानसिक परेशानी व तनाव में वृद्धि होगी।

● शयनकक्ष में टीवी व विद्युत के अन्य उपकरण आग्नेय कोण में ही लगाएं।

● ईशान कोण में बच्चों का कक्ष बनाएं। बच्चों की शिक्षा के लिए यह श्रेष्ठ रहेगा।

● ड्रेसिंग टेबल को उत्तर दिशा में पूर्व की तरफ सीधा करके रखना चाहिए।

● सोते समय पैर कभी द्वार की तरफ नहीं होने चाहिए।

● स्वागत कक्ष वायव्य कोण अथवा उत्तर-पूर्व में होना चाहिए। स्वागत कक्ष का ईशान कोण खाली छोड़ना चाहिए।

● स्वागत कक्ष में परिवार के मुखिया के बैठने की स्थिति पूर्व अथवा उत्तर की तरफ मुंह करके बैठने की हो।

● रसोईघर पूजा अथवा शौचालय के पास नहीं होना चाहिए।

● रसोईघर में पूजा का स्थान कभी नहीं बनाना चाहिए। रसोई मुख्य द्वार के ठीक सामने नहीं होनी चाहिए।

पराविज्ञान

प्रो. जमनालाल बायती

स्वर्ग से वापसी–मौत से भेंट

बात लगभग 16-17 वर्ष पूर्व 1995 के मध्य की है। लेखक अपने मित्र के साथ आंध्रप्रदेश की राजधानी हैदराबाद गया हुआ था, तब उसे अपने मित्र की पत्नी से मिलने का अवसर मिला। वह पिछले वर्ष गंभीर रूप से बीमार हो गई थी। उसे वहां राजकीय चिकित्सालय में उपचार के लिए भर्ती करवाया गया। भाभीजी से उनके संबंध में, स्वास्थ्य-बीमारी को लेकर समाचार पूछने पर उन्होंने जो घटना बताई, वह एकदम आश्चर्यजनक एवं पराशक्ति के संबंध में सोच-विचार करने को उद्यत करने वाली है।

भाभीजी के अनुसार उन्होंने मुझे आगे बताया कि चिकित्सालय के कर्मचारियों ने, चिकित्सकों ने उपचार सेवा सुश्रुवा में कोई कसर नहीं छोड़ी, चोटी के चिकित्सकों ने पूरे मनोयोग से जांच कर चिकित्सा की, पर रोगी की हालत बिगड़ती ही गई। तीन दिन बाद यह सोचकर कि अब रोगी कुछ ही पलों की मेहमान है, चिकित्सालय के कर्मचारियों ने भाभीजी को दूर खाट से उतार कर नीचे सुलाकर श्वेत चादर ओढ़ा दी। (आंध्रप्रदेश के चिकित्सालयों में पीढ़ियों से ऐसा ही रिवाज है कि मृत्यु के निकट पहुंचे रोगियों को वे जमीन पर लिटा देते हैं।)

अपनी बात जारी रखते हुए भाभीजी ने मुझे आगे बताया कि ज्योंही मुझे खाट से उतार कर जमीन पर लिटाया गया, तो दो द्वारपाल जैसे व्यक्ति एकदम दूध जैसे श्वेत कपड़े पहने मुझे लेने आ गए। दोनों ने मेरे दोनों हाथ पकड़े तथा मुझे अपने साथ चलने को कहा। मैं नितान्त अशक्त बीमार थी पर पता नहीं कहां से शक्ति आ गई, उनसे कोई प्रश्न ही नहीं किया। मैं उनके साथ चलने लगी, वे तो बस मुझे लिये जा रहे थे। एकाएक एक भव्य आलीशान भवन के बाहर ले जाकर खड़ा कर दिया तथा मैं मौन खड़ी देखती ही रही, वे मेरे दोनों तरफ मानो सुरक्षा के लिए खड़े थे। वे हाथों से कुछ संकेत कर रहे थे। वहां का वातावरण देखकर ही प्रसन्नता हो रही थी। स्वर्णमड़ित रत्नजड़ित दरवाजा था, दरवाजे के दोनों ओर दीवालों पर विभिन्न देवी-देवताओं के मनमुग्ध कर देने वाले आकर्षक चित्र बने थे। भव्य प्रासाद था वह, एकदम श्वेत पुता हुआ, सब लोग सफेद पोषाक पहने हुए थे। कुछ लोग मनपसंद सुस्वादु प्रसाद ग्रहण कर रहे थे, सेवकों द्वारा षटरस व्यंजन परोसे जा रहे थे। विभिन्न देवी-देवताओं की मनोहारी तस्वीरे दीवारों पर लगी हुई थी, उनके नीचे ही भवन प्रमुख, जो इस आलीशान भवन का स्वामी ही रहा होगा, विराजमान थे। उनका आसन बहुमूल्य तथा चिताकर्षक था, सहायिकाएं उनके दोनों ओर खड़ी चंवर डुला रही थी, उनकी पोषाक शालीनता लिए हुए पर प्रसन्नतावर्द्धक थी। रुचि संपन्न कुछ लोग ध्यान एवं पूजा-पाठ, ईश्वर आराधना में व्यस्त थे। चारों ओर फूल खिल रहे थे, उनकी मधुर सुगंध मन को आह्लादित कर रही थी। वहां पहुंचते ही मन मयूर नाच उठा। वहां रहने वालों के खाट कीमती तथा सुंदर थे, सबको स्वतंत्रता थी। आराम चाहने वाले आराम कर रहे थे। चारों ओर शांति थी, किसी को किसी से असंतोष या द्वेषभाव या मनमुटाव नहीं था, सभी अपनी-अपनी बातों या कार्यों में व्यस्त थे, कोई किसी को बाधा नहीं पहुंचा रहा था, सभी प्रसन्नचित एवं हंसमुख थे।

गमलों में हरे-हरे विकसित पौधे, उन पर महकते फूल भवन की शोभा बढ़ा रहे थे। धूप-दीप, अगरबत्ती की सुगंध से वातावरण सराबोर हो रहा था। लगा कि वहां का जीवनक्रम कितना संतोषजनक है, किसी को किसी से कोई शिकायत नहीं, कोई किसी अन्य सदस्य के काम में हस्तक्षेप नहीं कर रहा था, सभी अपने-अपने काम में व्यस्त थे। लगा कि यह तो साक्षात स्वर्ग है। सभी शांत मन से अपने-अपने काम में व्यस्त, सभी समरसतापूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे।

अचानक ही मुझे वहां लाने वाले दोनों व्यक्तियों के संकेतों पर एक आदमी बड़ी बही-सरीखी पुस्तक लेकर द्वार तक आया, उसने बही को कई बार उलटा-पुलटा तथा उसने दोनों व्यक्तियों को संकेतों से पता नहीं क्या कहा और हवा के झोंके की भांति द्वार ही बंद कर दिया। दोनों व्यक्तियों के साथ ही मैं भी बाहर ही रह गई और चाहते हुए भी मैं वह स्वर्गिक आनन्द न ले सकी। मैं उस परम सुखदायक निवास में प्रवेश से वंचित रह गई। यह सब इतना जल्दी हो गया कि मानो प्रकाश की किरण आई और लोप हो गई।

इसके बाद दोनों व्यक्ति मुझे चकित्सालय की धरती पर ले आये तथा लिटाकर वहीं रखी चादर ओढ़ा दी। तदन्तर दोनों व्यक्ति अदृश्य हो गए।

प्रभु को ऐसा स्वीकार नहीं था–रोगी की श्वास अति धीमी गति से चलती रही इसी बीच परीवीक्षाधीन चिकित्सक रोगियों को देखने आये। उस खाट को खाली देखकर उन्होंने कर्मचारियों से पूछताछ की। कर्मचारियों ने बताया कि रोगी मृतावस्था में पहुंच गई थी। अत: खाट से उतार कर नीचे जमीन पर सुला दिया।

कर्मचारियों से ऐसा सुनना था कि परीवीक्षाधीन डॉक्टरों में से एक डॉक्टर को जिज्ञासा हुई, उसने जानना चाहा कि रोगी को देखना चाहिए, जांच करना चाहिए। तत्काल ही वह धरती पर सुलाये रोगी के पास पहुंचा तथा देखने पर पाया कि रोगी की श्वास चल रही है, पर बहुत धीमी गति से। परीवीक्षाधीन डॉक्टर ने वरिष्ठ चिकित्सकों को बुलाया, उन्हें स्थिति की जानकारी दी। अब सभी चिकित्सक आश्चर्य से डूब गये, तुरंत ही रोगी को खाट पर लाया गया तथा उपचार किया गया।

वरिष्ठ चिकित्सकों ने परामर्श कर रोगी को कुछ शीघ्र प्रभावी एवं जीवन रक्षक दवाइयां दी। चिकित्सक भी आश्चर्य करते रह गये कि रोगी को कितना लाभ हो रहा है तथा डेढ़-दो सप्ताह उपचार के बाद रोगी को चिकित्सालय से छुट्टी दी गई।

घर पर प्रसन्नता छाई हुई थी। सब भाभीजी को कहने लगे कि भगवान को धन्यवाद है, उसकी कृपा है। 'काहे की कृपा है' मैं तो भगवान के चरणों में पहुंच गई थी–स्वर्ग में थी, उसी ने बुलाया था और उसी भगवान ने वापस मुझे इस नरक में ढकेल दिया। मां ने अनमने मन से उत्तर दिया।

-बी-186, राधाकृष्ण नगर, भीलवाड़ा-311001 (राजस्थान)

सेवाभावना

कन्हैया अगनानी

जोड़ों की सेवा बड़ा पुण्य

सिख समाज द्वारा चाहे वह गुरुनानक जयंती हो, गुरु गोविंदसिंह जयंती आदि धार्मिक कार्य हो बड़ी तन्मयता व समर्पण भाव से मनाने की परम्परा है। इन समारोहों को मनाने के लिए पूरा का पूरा सिख समाज तन, मन और धन से सेवा करने के लिए आतुर रहता है। लंगर में खाना बनाने से लेकर परोसने आदि के सिवाय सफाई आदि सभी प्रकार का कार्य करने के लिए समाज के लोग दिन-रात जुट जाया करते हैं।

अन्य सभी महत्वपूर्ण सेवादारियों के अलावा इस समाज में जोड़ों की सेवा का बड़ा पुण्य माना जाता है। जोड़ों की सेवा से संबंधित सेवादारियों को आदर भाव से देखा जाता है। वैसे सिख समाज में किसी मर्यादा का उल्लंघन करने वालों को 'तनखैया' नामक दण्ड दिये जाने की एक पुरानी परम्परा है। लेकिन यह कोई दण्ड नहीं है बल्कि प्रायश्चित अर्थात अपराध बोध से मुक्त होकर अहंकार व मद को त्यागना होता है। इसके लिए उन्हें ('तनखैया' घोषित किये गये व्यक्ति को) गुरुद्वारे आदि धार्मिक स्थल पर जोड़ों को साफ करने के लिए निर्देश दिये जाते हैं और वे इस कार्य को बड़ी प्रसन्नतापूर्वक करते हैं। सिख समाज में जोड़ों की सेवा एवं बर्तन धोने को अत्यधिक महत्व दिया जाता है।

समाज के लोगों का कहना है कि गुरुद्वारों में जो भी श्रद्धालुगण आते हैं वे एक शुद्ध व सच्चे घर में आते हैं। उनके पैरों की मिट्टी जो अत्यधिक पवित्र होती है। भक्तों के जोड़े (जूते-चप्पलों) पर लगी चरणों की धूल के बारे में सिख समाज की श्रीमती रश्मि अरोड़ा जानकारी देती हैं कि जो भक्तजन चालीस दिनों तक नियमानुसार सुबह उठकर स्नान आदि के उपरांत गुरुद्वारे में जाकर जोड़ों की सेवा करता है वह न केवल पुण्य का भागीदार बनता है बल्कि उस मिट्टी को किसी रोग पर स्पर्श किया जाए तो वह रोग जड़ से मिट जाया करता है।

सिख समाज में लंगर में बर्तनों को धोने के अलावा घायलों के जख्मों पर मलहम लगाने की सेवा के साथ-साथ अमृतसर आदि विश्वभर के गुरुद्वारों में भक्तजनों के जोड़ों की सेवा के अलावा जब वे गुरुद्वारे से बाहर निकला करते हैं तो उनके जोड़े पालिश तक किये मिलते हैं। जोड़ों की सेवा करने वाले बड़े प्रेम से जोड़ों को हाथों में उठाकर नम्बर से रखते जाते हैं। इस सेवा कार्य में हर आयु के लोग शामिल होते हैं।

संगत गुरु गोविंदसिंह जयंती हो या अन्य गुरुद्वारे में भजन कीर्तन का कार्यक्रम हो, के समय गुरुग्रंथ साहिब के समक्ष मत्था टेककर जब वापिस आती है तो उन्हें उनके जोड़े वापिस सही सलामत मिल जाते हैं। इस धर्म में जोड़ों की सेवा को सर्वोत्तम माना गया है, यही नहीं जोड़ों की चरण धूल को प्राप्त करना संगत अपना सौभाग्य मानती है।

जोड़ों की सेवा से जुड़ी एक खबर के अनुसार जयपुर के मालवीय नगर निवासी सरदार अमरिंदर सिंह का कहना है कि वे जब मात्र 12 वर्ष के थे तब से ही जोड़ों की सेवा में जुट गये थे। अपने पिता के निर्देशानुसार उन्होंने यह सेवा प्रारंभ की और विगत तीस वर्षों से लगातार करते हुए अपने को धन्य समझते हैं।

जोड़ों के रख-रखाव के बारे में यह सेवा कार्य इतना व्यवस्थित ढंग से किया जाता है कि संगत का कोई जोड़ा इधर-उधर नहीं होता। जोड़ों की सेवा में बच्चें भी पीछे नहीं हैं। मालवीय नगर निवासी खुशबू और अमरप्रीत दोनों भाई-बहनों के अलावा गुरुनानकपुरा के दस वर्षीय बलराज सिंह और आठ वर्षीय रेयान सिंह आदि बड़े बूढ़े दिल से जोड़ों की सेवा करते रहे हैं।

इस प्रकार की सेवाओं के बारे में सरदार परविन्दर सिंह एवं अंजनी कुमार बताते हैं कि गुरुद्वारों में इस प्रकार की सेवाएं प्रदान करने वाले सेवादारी अपने द्वारा की गई सेवाओं के बारे में यदि दूसरों को अपने मुख से याद बताता है तो उसके द्वारा किया गया पुण्य घटता जाता है, अर्थात वह सेवा करके भी सच्चा पुण्य नहीं कमा पाता, यानी कि किए कराए पर पानी फेर देता है।

सिख समाज द्वारा कहीं पर भी मनाये जाने वाले धार्मिक अवसरों पर जोड़ों की सेवा करने के लिए सेवादारी आगे चलकर आते हैं तथा मुख्यग्रंथी अथवा आयोजकों से अनुरोध कर ऐसी सेवाएं लेने को आतुर रहते हैं ताकि पुण्य के भागीदार बनकर अहंकार आदि दुर्गुणों से बचकर रह सकें। सिख समाज द्वारा बड़ी तन्मयता से यह कार्य करने वालों की प्रेरणा पाकर अब अन्य समाजों में, जैसे सिन्धी आदि सम्प्रदायों में भी जोड़ों एवं बर्तन धोने जैसी सेवाएं अर्पित करने को सेवादारी तत्पर रहा करते हैं। ताकि पुण्य अर्जन के साथ धन्य हो जाए।

मानव हित में सेवा वाले कार्यों का वास्तविक अर्थ, जो गहराई को लिए हुए है की समझ आज की युवा पीढ़ी को भी होने लगी है। यही नहीं बाहरी दुनिया में धनाढ्य, पद प्रतिष्ठा हासिल किये हुए लोगों को भी खुशी-खुशी समाजसेवा का कार्य करते हुए देखा गया है ताकि वे अहंकार से परे रहकर मानवता व आध्यात्मिकता के निकट रहते हुए अपने जीवन के हर मोड़ पर अपने को संतुलित रखते हुए बिना किसी प्रकार की झिझक व हिचक के मानव व जीवों की सेवा करते हुए अपने गुरुजनों व समाज का सच्चा समर्पित सेवादारी बन सकें।

आज के भौतिक युग में हर मनुष्य को जो पद हासिल कर जो अहंकार में डूब जाता है, उसे दूसरे की गरीबी, बेबसी, मजबूरी का आभास ही नहीं रहता। इसी प्रकार आर्थिक धन (रुपया) आ जाने पर व्यक्ति अपनों तक को पहचानने से साफ इनकार करते देखे गये हैं, उन्हें आवश्यकता है सिख समाज के गुरुनानक, गुरु गोविंदसिंह, गुरु तेगबहादुर, गुरु अर्जुनदेवजी आदि अन्य गुरुओं के अतिरिक्त समाज के सच्चे सेवादारियों से प्रेरणा लेने की, जो हर प्रकार का सेवाकार्य करते हुए जहां एक ओर पुण्य के भागीदार बनते हैं तो दूसरी ओर कर्मयोद्धा कहलाये जाते हैं।

-413, आदर्श नगर, गीता भवन के पास
जयपुर-302004 (राजस्थान)

The Ways Of Karma

Sri Sri Ravi Shankar

Every object in the universe is endowed with four characteristics: dharma, karma, prema and gyana. Of these, karma is the most talked about; it is also the most misunderstood. The Gita says: "Gahna Karmanyo Gathi" - Unfathomable are the ways of karma.

There are three types of karma: Prarabha, sanchita and agami. The first is latent karma, an impression or seed of action. The second is karma as action, and the third is karma as result. Prarabha means 'begun'; the action that is already manifesting and that is yielding its effect right now. You cannot avoid it or change it, as it is already happening. Sanchita is accumulated karma. It is latent or manifested in the form of a tendency or impression in the mind.

Sanchita karma can be burned off by spiritual practices before it manifests. Agami karma is the future karma of action; that which has not yet come and which will take effect in the future. If you commit a crime, you may not get caught today, but will live with the possibility that one day you may get caught.

Karma is also always bound by time, because every action has a limited reaction. If you do something good to people they will come to thank you and be grateful to you as long as they are experiencing the effect of your action. So, karma has only a limited sphere of its effect, be it good or bad.

It is often asked, "Why are good people made to suffer while those who commit injustice go unpunished?" Such questions arise when we see an event in its limited framework. No good action will yield a bad result and no bad action will bring a good result. This is the law of karma. As you sow, so shall you reap. If you sow a mango tree, some thorny bushes may come up because of the seeds present in the manure brought from somewhere else. It is not the mango seed that brings up the thorny bush. Your mango seed will bring mango fruit, in due course.

Karma is that which propels reincarnation. The stronger the impression, the greater the possibility of the next life being according to that. So, often you reincarnate like the person you hate or love. The mind which is full of different impressions leaves this body but the impressions await suitable situations to come back. So the last thought is very important. Whatever you do throughout your life, in the last moment your mind should be free and happy. Our perception of suffering, of good and bad, is always relative. God is absolute reality; a witness of all. See God as a movie director, rather than as a judge. He has no ill feeling for the villain and no special favour for the hero. Each one is playing her role.

An awareness of dharma helps in comprehending the strange ways of karma. Whenever you see bad karma or someone suffering, you need to help. That is your dharma. If you do not do your dharma, then you incur bad karma for not having done your dharma. Take recourse in your dharma to transcend the bondage of karma and avoid getting stuck with events or personalities. Live with karma; don't be attached to it. ''See action in inaction and inaction in action,'' says the Gita. Awareness, alertness, knowledge and meditation will help erase past impressions. It has the strength to dissolve and destroy any karma and free you.

Superhuman being

Meera Seshadri

We should remember that whatever be the deity we believe in, or whatever is the form of the Lord that we have visualised Him in, it's all one Supreme Being. Even today, I reminisce over a rather amusing conversation that we, a group of gals indulged in, when we were teens. Each of us extolled and rhapsodized on the power/strength of our favourite God, the deity in whom we had that implicit/infallible faith.

To one girl, it was Lord Ganesha being her favourite deity, for, she declared, with His grace, one can surmount in life, even the seemingly insuperable hurdles, besides revelling in roaring success in all spheres of life.

The other girl stated that she was a staunch devotee of Goddess Lakshmi, with whose blessings even the penury-stricken souls can miraculously turn into incredibly rich folks.

Another girl began eulogising the divine power of Goddess Saraswathi, with whose grace even a slow-coach can turn spry n' sprightly with great celerity of mind, and a person who is tad obtuse can metamorphose into one among the intelligentsia or erudite beings.

Yet another girl gushed that Lord Hanuman was her fave deity, with whose grace one can eternally be in fine fettle, enjoying the best health always.

Goddess Durga being my fave deity, I expatiated on the reason behind Her being called as the Adiparashakthi – the all powerful, who has in her multiple hands the powerful weapons of Vishnu chakra, Shiv's trident, the divine sword, the mace, the bow n' arrow, et al.

Well, this conversation was years ago, when our minds were still in that inchoate stage.

But interestingly, just the other day, at a temple, I overheard a woman exhorting the other woman to worship a few benevolent deities, as she said; one could effortlessly please and propitiate those particular deities, without imprecating any curse, even if the pooja rituals go a tad slipshod while worshipping them!

Here I'm reminded of a story of a person, who'd be digging the ground, in order to sink a well.

Within moments of digging, he'd be getting disillusioned for not having hit upon the water source, and hence tries digging at a different place.

A passerby, who notices this person digging the ground at more than ten to fifteen places, tells him that instead of having dug at several places, had he only dug the ground at one particular place, he'd have by then found the water source, for the same efforts.

Similarly, while praying, when one tries concentrating on one particular God, one can find experiencing that state of peace n' relaxation, relatively in lesser time.

Also, we should remember that whatever be the deity we believe in, or whatever is the form of the Lord that we have visualised Him in, it's all one Supreme Being.

Apparently, whatever prayer we offer to any deity, it all gets channeled towards that one invisible/invincible Supreme Power, which is governing the entire universe.

It is exactly like the umpteen, flowing rivers n' rivulets, merging with one massive ocean!

Mahavira's family philosophy

Gani Rajendra Vijay

Sukhi Parivar Abhiyan aims to promote Ahimsa, Peace and brotherhood. It is a movement of Mahavira's teaching. Family is the basic unit of society. Jain Philosophy lays down simplest guidelines to lead an ideal life i.e., Self-confidence or Self-reliance, Self-knowledge (Atma-gyaan) and Self-satisfaction. Every one, wherever and whatever he may be, can make his life an ideal one, because every one is responsible for one's prosperity and downfall. Prosperity or downfall is not dependent on any omnipotent God. The physical comforts or misery of a person result from his good or bad deeds in life. If he wants he could achieve bliss in his life by conquering his desires, passions and indulgence in mundane pleasures. Self-reliance is a basic attribute of every person. If a person awakens his eternal powers, realizes his duties / responsibilities and leads his life with self-confidence, he is sure to get success in life.

Mahavira's philosophy preaches every one to be tolerant and respectful to the others. To listen and to understand to the other's point of view and to react with positive approach. Obstinacy of thoughts generates feelings of inequality, argument and conflict in life. One needs to be honest in accepting the truth.

Mahavira's philosophy preaches accumulation of minimum physical comforts for leading a contended life. The passion of acquiring maximum and unnecessary possessions leads to mental tension, jealousy, extreme aversion, violence, untruth and all sort of bad habits. This also results in mutual exploitation. Satisfaction in life brings happiness, prosperity and eternal peace. The fundamentals for a contended life are: to be ready to extend help to others to the extent possible; to keep good relations with others without a desire for any reciprocal gain; and to try to keep continuous purity in all walks of life.

For peace we have to keep on making our efforts all over the world. This is our experience that without training and development, the message of peace and non-violence cannot be applied. In principle, we accept that some progress is being made but when it comes to practice even the teachers of ahimsa have been seen becoming violent.

That is why, to train individuals a programme has been chalked out. All persons who believe in non-violence should first accept training in ahimsa and also convince others to undergo similar training. If we can apply these four points in our life then lot of problems will automatically get resolved.

The head of the family is not as tolerant and balanced today as he should be. This is the first aberration. Respected Acharya Srimad Vallabh Suriji and Acharya Srimad Inderddin Suriji had given a formula concerning the capability of, and the affection for, the head of the family or society. If these two things were there, the family would not disintegrate. The head of the family should possess a sense of equality. His attitude should be inspired by equality. If there are four sons, his treatment should be the same for all. He should also possess competence andtolerance as well. A family is constituted of people with different likings and different dispositions. All these should be accommodated as far as possible. Affection and feeling ofaffinity towards all should prevail. This is essential for keeping the family united.

A problem of the present times is that many temptations have emerged and many wrong notions have developed. Among them, the foremost is the false notion of freedom. Among four brothers, three may be weak. In the past, the one strong brother provided support to the others. Today the thinking is different. He wonders why he should take on all the burden?

He wants to make rapid progress and to go ahead on his own This selfish mentality has also broken families. Another thought of the present times that is responsible for the fragmentation of the family is that everybody wants to live independently.

Nobody wants to depend on or follow anybody. All these are the factors leading to the conditions of disintegration of the family.

Guru is god

Ramnath Naryanswamy

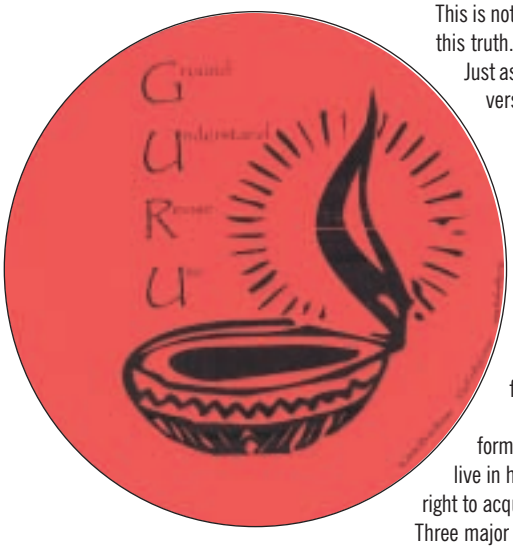

We often make the mistake of thinking that the words of a Mahatma are in the nature of pious homilies that are difficult to practise.

This is not true. Pronouncements of a self realised Master are beset with deep meaning. Our scriptures affirm this truth. For example, the Guru Gita affirms that the entire universe is contained in the being of the Guru. Just as ordinary human beings experience the universe outside them, a Sadguru experiences the entire universe inside Him or Her. In reality, the Guru is the essential truth of our universe.

The Guru is God in human form. The very presence of a Guru is a compelling validation of the promise Lord Krishna made in the sacred Bhagavad Gita that He incarnates in human form each time the forces of adharma or unrighteousness exceed the forces of dharma or righteousness. The Guru is the living personification of this sacred promise.

According to Sadguru Sri Sharavana Baba, all human beings need a certain yogam or destiny to enter or be attracted to spiritual life. While spirituality is meant for everybody, not everybody is attracted to the spiritual path. This destiny is not bestowed on all. One has to consciously earn it in this life.

Destiny is shaped by selfless service. Love all, hurt none, worry less whether others are performing their duties, worry more whether you are performing the duties allotted to you.

"Punyam or spiritual merit is best earned when all our thoughts, words and deeds are transformed into offerings to the Divine Principle or Supreme Intelligence. Such merit accrues to us when we live in harmony with all creation. This principle is sacrifice. When we perform selfless actions we earn the right to acquire such merit."

Three major instruments may be deployed to ensure the accrual of this merit: practise of meditation; chanting the holy name of God and worship.

संकटमोचक हैं मेंहदीपुर के बालाजी

पुखराज सेठिया

श्री मेंहदीपुर बालाजी मंदिर राजस्थान के दौसा जिले में स्थित है। मूलत: यह मंदिर पवनपुत्र हनुमान का मंदिर ही है। लोक मान्यता है कि पूर्वकाल में श्री बालाजी राजस्थान की अरावली पहाड़ियों में बुरी आत्माओं के नाश हेतु प्रकट हुए। यह स्थान बुरी आत्माओं, काला जादू आदि से पीड़ित लोगों को कष्टों से छुटकारा दिलाने के लिए प्रसिद्ध है। पीड़ित लोग यहां आकर श्री प्रेतराज सरकार यानी मेंहदीपुर के बालाजी और श्री भैरवनाथ के दर्शन कर अपनी पीड़ा से मुक्ति के लिए प्रार्थना और पूजा करते हैं।

भक्तों और श्रद्धालुओं की आस्था और विश्वास है कि श्री बालाजी दण्डाधिकारी के रूप में बुरी आत्माओं को दण्ड देकर भयंकर मानसिक और शारीरिक कष्ट भोग रहे व्यक्ति को पीड़ा मुक्त कर देते हैं।

मेंहदीपुर बालाजी का मंदिर श्री हनुमानजी की अदालत माना जाता है। इस मंदिर के साथ ही यहां पूजा गृह, भैरव मंदिर और राम दरबार मंदिर के दर्शन का भी महत्व है। जहां दु:खों से छुटकारा पाने के लिए जनसैलाब उमड़ता है।

राजस्थान के मेंहदीपुर बालाजी का मंदिर श्री हनुमानजी का बहुत जागृत स्थान माना जाता है। लोगों का विश्वास है कि इस मंदिर में विराजित श्री बालाजी अपनी देवीय शक्ति से बुरी आत्माओं से छुटकारा दिलाते हैं। इस मंदिर में हजारों भूत-पिशाच से त्रस्त लोग प्रतिदिन दर्शन और प्रार्थना के लिए आते हैं, जिन्हें स्थानीय लोग संकटवाला कहते हैं। भूतबाधा से पीड़ित के लिए यह मंदिर अपने ही घर के समान हो जाता है और श्री बालाजी ही उसकी अंतिम उम्मीद होते हैं। यहां श्री बालाजी की सेवा और पूजा करने वाले महंत सभी पीड़ितों को भूत बाधा से मुक्त करने के लिए श्री बालाजी के सामने उपचार करते हैं। इसके लिए वे पवित्रता का पूरा ध्यान रखते हैं तथा इस कार्य को लोक कल्याण की भावना के साथ करते हैं।

यहां पीड़ाओं से मुक्त होने के लिए आस्था और विश्वास की ताकत को देखा जा सकता है। यहां पर प्रेतबाधाओं से लोगों को मुक्त करने के लिए असाधारण और असामान्य, कष्टप्रद भौतिक चिकित्सा के उपाय देखे जा सकते हैं। यह सारे तरीके पहली नजर में असहनीय दिखाई देते हैं। किन्तु प्रेतबाधा से मुक्त होने के लिए हजारों श्रद्धालुओं की इस तरह के तरीकों और उपचारों पर विश्वास और श्रद्धा है। श्री मेंहदीपुर बालाजी और इस स्थान पर विश्वास और अगाध श्रद्धा रखने वालों और उनके अनुभव के अनुसार श्री मेंहदीपुर बालाजी की शक्ति अद्भुत, अलौकिक है और भौतिक संसार से परे है। यहां प्रेत पीड़ा, जादू-टोना से मुक्ति के लिए ही श्रद्धालु नहीं आते, बल्कि अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति की कामना को लेकर भी श्रद्धालुजन बड़ी संख्या में आते हैं। यहां अपनी प्रार्थना दर्ज करने के बाद आश्चर्यकारी एवं चमत्कारी रूप से लोगों की मनोकामनाएं पूर्ण होते हुए देखी गयी है।

श्री मेंहदीपुर बालाजी के अन्य दर्शनीय देवस्थान भी है। जिनमें नीलकंठ महादेव मंदिर, माताजी का मंदिर, केलादेवी का मंदिर और प्रताप वाटिका प्रमुख हैं।

-एम-25, लाजपत नगर-2, नई दिल्ली-110024

चाय एक लाभ अनेक

दोयल बोस

चाय दुनिया भर में पानी के बाद अधिक पिया जाने वाला पेय है। हाल के वर्षों में चाय के प्रभावों के बारे में व्यापक अनुसंधान हुए हैं। चाय के सेवन से कई तरह के कैंसर, हृदय रोग, गुर्दे की पथरी, दांतों में छेद जैसी कई व्याधियों से बचा जा सकता है। चाय से चैन तो मिलता ही है, इसकी मुलायम पत्तियों में मौजूद तत्वों टैनिन, फ्लेवोनाएड्स, सैयोनिन, फ्लोराइड थायमाइन, कैफीन, विटामिन-सी, खनिज और इपीगैलोकैटेगिलेंट, चाय को एक अनोखा, स्वादिष्ट, स्वास्थ्यवर्धक तथा सौंदर्यवर्धक पेय बनाते हैं।

- चाय त्वचा की रक्षा में सहायक है। यह तनाव दूर भगाता है। जरा याद कीजिए, भारी व्यस्तता के बीच आपको अगर चाय की एक गर्मागर्म प्याली मिल जाए तो कैसा लगेगा आपको।
- टी बैग को भिगोकर त्वचा पर लगाने से ताजगी का अहसास होता है।
- दो पूरे सूखे आंवले, एक पूरी फली शिकाकाई, थोड़ी-सी ब्राह्मी व आधा छोटा चम्मच चायपत्ती, पाव भर पानी में डालकर लोहे के बर्तन में उबाल कर ठंडा करें या रात भर भिगोकर रखें। फिर इस मिश्रण को छान कर बालों पर तेल की भांति रगड़ कर लगाएं फिर किसी पोलीथीन से सिर को बांध दें, ताकि सिर से पानी न टपके। तीस मिनट बाद सिर को अच्छी तरह से सादे पानी से धो डालें। सप्ताह में एक बार यह प्रयोग करें। इससे बाल काले, लंबे व चमकदार हो जायेंगे।
- पोदीने की पत्ती डालकर चाय पीने से मोटापा कम होता है।
- अनिद्रा से उत्पन्न थकान चाय पीने से दूर हो जाती है।
- चाय की पत्ती को पानी में डालकर उबालिए, छानकर गरारे कीजिए, गले के दर्द में आराम मिलेगा।
- प्रयोग की गई चाय की पत्ती को अच्छी तरह धोकर, छान कर धूप में सुखा लें। इसे कपूर के साथ जलाएं, इससे मक्खी-मच्छरों से राहत मिलेगी।
- दो मग पानी में तीन चम्मच चाय की पत्ती डालकर खूब उबालें। फिर इसे छान लें। बालों को शैंपू करने के बाद, इस पानी से बालों को आखिरी बार अच्छी तरह धो लें। इससे बालों की कंडीशिनिंग भी हो जाएगी और बाल चमकदार भी बनेंगे।
- बालों में मेहंदी लगाने वालों को बालों पर मेहंदी का गाढ़ा रंग चढ़ाने के लिए चाय को उबालकर छान लें। ठंडा होने पर मेहंदी को उस पानी से घोलें। इससे बालों पर मेहंदी का गाढ़ा रंग चढ़ेगा।
- दांत के दर्द में, दाढ़ में कीड़ा लगने से कैविटी बन जाती है, जिसका इलाज होता है, उसकी फिलिंग करवाना अथवा उसे उखड़वा देना। पर यदि आपने इसका इन दोनों में से ही कोई इलाज न किया हो, तो एक बार दाढ़ में दर्द होने पर उसे शांत करना बड़ा मुश्किल होता है। जैसे ही दाढ़ में दर्द उठे, चाय की चुटकी भर पत्ती लेकर दाढ़ की कैविटी में भर लें। कुछ ही समय में दर्द से राहत मिल जायेगी।
- चाय की पत्ती को उबालकर उसका पानी छान लें। इस पानी को ठंडा करके इसमें रूई के फाहे भिगोकर आंखों के ऊपर रखकर दस-पंद्रह मिनट रखें। इससे थकी आंखों को आराम मिलता है।

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें

पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

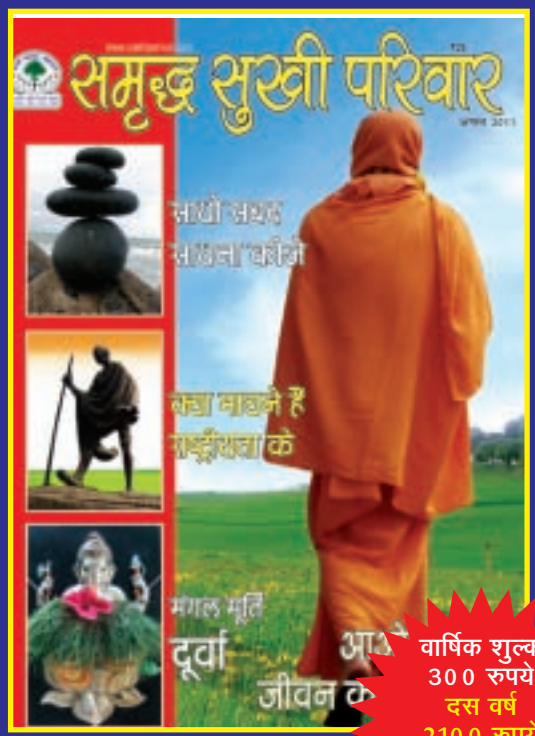

कवर अंतिम पृष्ठ	25,000
कवर द्वितीय/तृतीय	20,000
भीतरी रंगीन पृष्ठ	10,000

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन–जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई–मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट **सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली** के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए **IFS CODE UTIB0000119** का प्रयोग करें।

सुखी परिवार फाउंडेशन

टीएसडब्ल्यू सेंटर, ए–41/ए, रोड नंबर–1, महिपालपुर चौक, नई दिल्ली–110 037

फोन: +91–11–26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

ललित गर्ग

अध्यात्म की ऊंचाइयों के गहरे सूत्र

'सुखी बनो' आचार्य श्री महाश्रमण का एक ऐसा प्रवचन संकलन है जिसमें उनके द्वारा श्रीमद्भगवद्गीता और उत्तराध्ययन के तुलनात्मक विवेचन पर दिये गये प्रवचनों को निबंध के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जहां बुद्धि और हृदय का समन्वय सदृश्य होता है। इस कृति में समाज, देश और विश्व को नया दिशाबोध तथा अनेक विषयों पर चिंतन-मनन प्रस्तुत किया गया है। 41 निबंधों से संवलित यह कृति समाज के विभिन्न वर्गों का मार्गदर्शन करने में सक्षम हैं। विशेषत: इस कृति में जैनधर्म के मूलभूत सिद्धांतों और भारतीय संस्कृति के अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों का अनावरण हुआ है।

संक्षेप में कहें तो इसका सिंहावलोकन वर्तमान के पर्यालोचन एवं भविष्य का दिशा-निर्धारण है।

भगवान श्रीकृष्ण एवं अर्जुन के बीच का संवाद हो या महावीर की वाणी–ये युगीन दर्शन है, उसे किसी दायरे में सीमित नहीं किया जा सकता, जीवन के साथ उसकी उपयोगिता जुड़ी हुई है। उत्तराध्ययन एवं श्रीमद्भगवद्गीता में विद्यमान अनेक विशिष्ट तत्त्व आज के समस्या बहुल दौर में समाधान का माध्यम बन सकते हैं। उनका जिस रूप में प्रस्तुतीकरण होना चाहिए, वह नहीं हो पा रहा है, यह एक गंभीर चिंतन का विषय है। आचार्य श्री महाश्रमण ने इस पर गहनता एवं गंभीरता से चिंतन किया है और उस चिंतन की निष्पत्ति 'सुखी बनो' कृति के रूप में प्रस्तुत हुई है। इस पुस्तक में समता रखो, अनुशासन में रहो, कलात्मक जीना सीखो, स्थितप्रज्ञ बनो, मन को जीतो, चक्रव्यूह को तोड़ो, सुखी बनो, इन्द्रिय संयम करो, निर्लिप्त रहो, निष्काम प्रवृत्ति करो, रागद्वेष मुक्त रहो, पुरुषार्थ करो, पंडित बनो, कामचेतना को मंद करो, जैसे- विशिष्ट लेखों के माध्यम से लेखक ने सुखी बनने के सूत्रों को प्रस्तुत किया है।

आचार्य श्री महाश्रमण एक ऐसे संत हैं जिनके लिए पंथ और ग्रंथ का भेद बाधक नहीं बनता। आपके प्रवचन सर्वजन हिताय होते हैं। हर जाति वर्ग, क्षेत्र और सम्प्रदाय की जनता आपके विचारों और उपदेशों से अभिप्रेरित होती है।

आज चतुर्दिक अशांति के काले बादल उमड़ रहे हैं। सर्वत्र कोलाहल और रक्तपात है। कारण चाहे धार्मिक हो या आर्थिक, फिर चाहे सामाजिक हो या राजनीतिक, पर तथ्य यही है कि वर्तमान पीड़ित है अशांति से। तो प्रश्न यह है कि उसका मूल कहां है? आचार्य श्री महाश्रमण ने जैनदर्शन और वैदिक दर्शन के आलोक में अशांति के मूल को खोजने का प्रयत्न किया है। वास्तव में इस तरह की पुस्तक अपने समय या विषय का आईना होती है। जिसमें समग्र युगदर्शन को देखा जा सकता है।

'सुखी बनो' आचार्य श्री महाश्रमण की भारतीय संस्कृति की दो प्रमुख परम्पराओं की विशेषताओं का आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिक लेखा-जोखा है, इसमें न कोई आग्रह और न कोई अतिरेक है। यथार्थ को यथार्थ की दृष्टि से देखने का लेखक का यह विनम्र प्रयत्न निश्चित आम पाठक को सोच के नए एवं विस्तृत क्षितिज प्रदत्त करता है।

इस कृति का संपादन साध्वी सुमतिप्रभा ने कुशलता के साथ किया है। सफल और सुखी होने की प्रेरणा देने वाली यह पुस्तक व्यक्तित्व को कामयाब बनाने का आधारसूत्र भी है। पुस्तक की छपाई उत्कृष्ट एवं त्रुटिरहित है। पुस्तक का आवरण सादगीमय आकर्षक एवं मोहक है।

पुस्तक	:	**सुखी बनो**
लेखक	:	**आचार्य श्री महाश्रमण**
प्रकाशक	:	**जैन विश्वभारती, लाडनूं (राजस्थान)**
मूल्य	:	**60 रुपए, पृष्ठ : 154**

छलकता गिलास

बरुण कुमार सिंह

छलकता गिलास' पुस्तक में 'पत्र' एवं 'लघुकथाएं' को समाहित किया गया है। जिसमें छोटे-छोटे 'पत्र' एवं 'लघुकथाएं' के माध्यम से लेखक दिलीप भाटिया ने बहुत ही सरल शब्दों में जीवन के यथार्थ को कहने का प्रयास किया है। समाज में व्याप्त कुरीतियों एवं समस्याओं के लिए सकारात्मक समाधान देना ही लेखक का लक्ष्य है।

सकारात्मक सोच आवश्यक है। गिलास में 50 प्रशितत पानी को कभी आधा खाली मत कहना। हमेशा आधा भरा समझना। बड़े होने से अधिक महत्वपूर्ण है, अच्छा होना। बड़ों का आदर करना। अच्छा इंसान बनना।

पत्रों में मुख्य रूप से हैं- समय प्रबंधन, आधी खाली नहीं आधा भरा कहो, खाली नहीं छलकता गिलास, क्या खोया क्या पाया, छलकता गिलास, छलकती पलकें, तूफान और दीपक, सफल नहीं सार्थक बनो, गीता-छलकता गिलास, रोशनी, अमृत-कलश, लीक से हटकर, खोया नहीं पाया ही पाया, शेष कुशल है, एक जीवन तो बचाइए,एक पत्र 'कुपुत्र' के नाम, आशीर्वाद, मनीऑर्डर, शगुन, बेवकूफ, एक उत्सव दो दृश्य, दूसरी पोती। लघुकथाएं में- रिश्ते-नातों की लघुकथाएं, ड्रिंक और जूस, रेत और पत्थर, आतंक और शांति, अंग्रेजी और हिन्दी, जन्मदिन और बर्थ डे, एबॉर्शन और डिलीवरी, पाप-पुण्य, तीर्थ-यात्रा, तिलक-दहेज, पापा! तुम खराब हो, पढ़ाई, कन्यादान, सुंदरकांड, घूंघट, वसीयत, विरोध, गृह-प्रवेश, सम्मान, ट्यूशन और प्रैक्टिकल, बेटा-बेटी, पुल और दीवार, सेवा और मेवा, भाषण और मौन, स्कूल और मंदिर, कोरा कागज, सांप-सीढ़ी, आंधिया और चिराग, शोक सभा, अतिविश्वास,पैसों का स्वागत, अंधेरे का दीप, स्टेटस, अपना-अपना होमवर्क, महंगा लड़का, कर्तव्य और अधिकार, आधा खाली आधा भरा, खाली नहीं-छलकता गिलास, यश-अपयश, मापदंड, संकटमोचन, सरकारी-प्राइवेट, शीशे के घर, अपनों के लिए, बेटी का महत्व, जन्मदिन : नई परिभाषा, लीक से हटकर, समय-बजट, रिर्टन गिफ्ट आदि के माध्यम से हर अनछुए पहलू पर लेखक दिलीप भाटिया ने प्रकाश डाला है।

लेखक भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग के वैज्ञानिक अधिकारी रह चुके हैं। उनके हर 'पत्र' एवं 'लघुकथाएं' में वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं मौलिकता की झलक मिलती है, जिसे आप पढ़कर ही लेखक के विचारों से अवगत हो सकते हैं। खासकर यह पुस्तकों बच्चों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है क्योंकि इसमें प्रेरणादायी विचारों को सहज ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

पुस्तक	:	**छलकता गिलास**
लेखक	:	**दिलीप भाटिया**
प्रकाशक	:	**बोधि प्रकाशन, जयपुर-302006**
मूल्य	:	**रु. 50, पृष्ठ : 120**

स्वयं को देखें

डॉ. विजयप्रकाश त्रिपाठी

जगत में दूसरों की बुराइयां देखने वाले लोग बहुत मिल जायेंगे, लेकिन अपनी ओर निहारने वाले लोग कम ही होते हैं। बहुत कम लोग मृत्यु के पूर्व अपने आपको पहचान पाते हैं। इसी प्रकार बहुत कम लोग अपने जीवन काल में संचित शक्ति प्रकट कर पाते हैं, प्राय: शक्तियों को साथ लिए मृत्युलोक चले जाते हैं। सत्य तो यह है कि मनुष्य के भीतर अनेकानेक गुप्त शक्तियां सुप्त पड़ी होती हैं, वह स्वयं में अपनी योग्यता-क्षमता का पता तक नहीं करते। वे विभूतियों के अभूतपूर्व ढेर की ओर आंख तक भी नहीं उठाते हैं। यह ठीक है कि बाहर की अनेकानेक वस्तुओं को जान-समझकर हम ज्ञानी कहलाए, परन्तु यह भी कम आवश्यक नहीं कि हम अपने को जानना-समझना भी सीखें। जो स्वयं पर दृष्टि डालने का प्रयास करता है, वही महान बनता है। ऐसा मनुष्य संकट और बाधाओं पर विजय पाकर सदैव अपना पथ प्रशस्त करता है। यदि हम महापुरुषों का जीवन देखें तो स्वीकार करेंगे कि वे सदैव आत्मनिरीक्षण करते रहते थे। उनकी प्रत्येक भूल उन्हें कुछ नवीन सुधार की ओर प्रेरित करती थी। यदि हममें भी महान बनने की ललक या चाहत उठे तो दूसरे को तुच्छ समझने या छिद्रान्वेषण की भावना त्याज्य करनी होगी। दूसरे को मूर्ख या तुच्छ समझने वाला मनुष्यत्व खो देता है। प्रयास हो कि दूसरों की त्रुटियां देखने की अपेक्षा अपनी कमियां तलाशें। उन्हें दूर करने हेतु अभी से जुट जाएं। अपनी शक्ति को पहचानने और उनका सदुपयोग करने में ही मनुष्य की अपनी अलौकिक शान है।

प्रभु ने हमें विभूति-विरासत सौंपते समय विश्वास किया था कि इनका दुरुपयोग कभी न होगा। उदरपूर्ति व संतान वृद्धि में अपनी अलौकिक सामर्थ्य को खो बैठने के लिए उतारू हो जाना न मात्र परमात्मा के प्रति विश्वासघात है, अपितु आत्मघात भी है। आज जो भी शक्ति हमारे भीतर है उससे कहीं अधिक शक्ति पहले से विद्यमान हैं आवश्यकता है मात्र इस बात की कि स्वयं का महत्व समझें, शक्ति पहचानें व समय का उपयोग करें। जीवन का एक-एक क्षण बहुमूल्य है, उसे बरबाद न होने दें। जब भी जिस शुभ कार्य की इच्छा जाग्रत हो, उसे तत्काल उसी क्षण में प्रारंभ कर दें, अपनी संपूर्ण शक्ति को उस कार्य में एकाकार कर दें। वह क्षण अत्यंत महत्वपूर्ण होगा, जिस पल आप यह अनुभव कर पायेंगे कि विश्व-वसुन्धरा को इसकी प्रबल आवश्यकता है। मनुष्य के भीतर एक और महान व्यक्तित्व समाहित रहता है, जो अन्य बाहरी व्यक्तित्व से अनेक गुना महान होता है। जिस क्षण मनुष्य अपनी इस अलौकिक गरिमा की झलक पा लेता है, उसके पैर मानव से महामानव बनने के मार्ग पर अग्रसर होने के लिए मचल उठते हैं। अब यह हो सकता है कि आपका वर्तमान संकट-बाधाओं से बुरी तरह घिर गया हो। आपत्तियों ने आपके व्यक्तित्व का विकास न होने दिया हो, पर इससे घबराने की कोई बात नहीं? अग्नि की बढ़ती तपन का तात्पर्य है- सोने की और ज्यादा चमक होना। चंदन की और अधिक घिसाई का भाव है- सुगंध का हर क्षण नया विस्तार। मनुष्य व्यक्तित्व भी कुछ ऐसा ही है, जब तक विपत्तियां इसे परेशान न करें, इसकी विभूतियों की चमक तीव्र नहीं होती। अतएव आत्म निरीक्षण के माध्यम से स्वयं की गरिमा को पहचानिए। जैसे ही किसी प्रतिभा का अंकुर आपको अपने अंदर दिखलाई पड़े, उसको पुष्पित-पल्लवित होने का अवसर दीजिए। कौन जानता है कि कल के भविष्य में आप विश्व के उच्च कलाविद् बन जाएं, विद्वान-लेखन होने का गौरव प्राप्त करें। समाज आपको राजनेता के रूप में पाकर कृतकृत्य हो। जो स्वयं को जान लेता है, परम तत्व को समझना भी उसके लिए सरल है। ऐसे मनुष्य ही प्रभुसत्ता के दूत कहलाते हैं।

-86/323, देवनगर, कानपुर-208003 (उ.प्र.)

बूढ़ों की खिलखिलाहट

सुधा गुप्ता 'अमृता'

पल-पल खिसकती हुई जिंदगी को एक न एक दिन बूढ़ा होना ही है, यह अकाट्य है। शाश्वत सत्य है। हमारे बुजुर्ग हमारे पूज्यनीय हैं, वंदनीय हैं। उनका सम्मान किया जाना चाहिए, यह बात हमारे संस्कारों में होनी चाहिए किन्तु, आज के इस आपाधापी के दौर में लोग इस बात को नकारने लगे हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण वृद्धाश्रम हैं। जहां लोग अपने बुजुर्गों को छोड़कर अपने कर्तव्यों की इतिश्री कर लेते हैं और बुजुर्ग अपने अकेलेपन के मौन सन्नाटे को बिना किसी यंत्र के सुनते रहते हैं।

यंत्रवत् भागती जिंदगी हमें किस ओर ले जा रही है, किस छोर पहुंचायेगी। हर घर में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि बच्चे जैसा देखते हैं वैसा ही अनुसरण करते हैं। सेवानिवृत्त होते ही व्यक्ति को बेरोजगार, फुरसती समझकर उनके साथ ऐसा व्यवहार होने लगता है, मानो वे व्यक्ति नहीं वस्तु हों। बुढ़ापा ऐसी अवस्था है जिसमें अनेक तरह के कष्ट बीमारियों घेर लेती हैं। शरीर साथ नहीं देता है। ऐसी दशा में यदि घर-परिवार के लोग भावनात्मक सहयोग नहीं देते तो वे मन से भी टूटने लगते हैं। उनकी जिंदगी तिल-तिलकर दम तोड़ने लगती है। इन परिस्थितियों में वे आत्महत्या जैसे कदम भी उठा लेते हैं। क्या आप भी उन्हें ऐसा देखना चाहेंगे? क्या यह हमारी संस्कृति का हनन है? क्यों न हम अपने बुजुर्गों/बड़ों के सम्मान व सेवा सुश्रुषा के लिए संकल्पवत् हो।

सीप अपने भीतर जिस तरह मोती छुपाकर रखता है उसी तरह बुजुर्गों के मन रूपी सीप में आशीर्वाद रूपी अनेकों मोती छुपे रहते हैं। मन प्रसन्न होते ही वे इन मोतियों को दुआओं के रूप में लुटाते रहते हैं। बुजुर्गों की सेवा करके हम उनसे ये मोती प्रतिपल पा सकते हैं और उनकी भावनाओं से जुड़कर हम अपनी जिंदगी को सुंदरतम बना सकते हैं।

मुझसे यदि कोई पूछे कि तुम्हें सबसे अजीज क्या है तो मैं यही कहूंगा कि 'बूढ़ों की खिलखिलाहट।' चलो बुजुर्गों के साथ मिलकर बैठें। उनके साथ खेलें। उनसे कुछ सीखें। उनके मन को हल्का करें। हंसे, हंसाएं। बूढ़ी होती जिंदगी का सहरा बनें। क्योंकि

मंदिर अगर है मां पिता गुम्बद बना है
घरौंदा मां बनाती है तो तिनका खुद बना है।
उनकी खामोश आंखों में सदा दरिया उफनता है
जीवन संगीत है गर मां तो पिता मंत्र बना है।

-दुबे कॉलोनी, बरही रोड,
कटनी-483501 (म.प्र.)

अध्यक्षीय

मनीष जैन

जिन्दगी चलती जायेगी

राबर्ट फ्रॉस्ट के अनुसार कि तीन शब्दों में मैंने जिंदगी में जो कुछ भी सीखा है, उसका सार दे सकता हूं–जिंदगी चलती जायेगी।' यह सकारात्मक जीवन का एक नजरिया है। आपने अपनी जिंदगी मुश्किलों से घेरकर भी किसी को भरपूर, भयरहित नींद दे दी, किसी के तनाव को कम कर दिया, किसी चेहरे पर हंसी के कुछ खूबसूरत निशान आपकी वजह से बन पाये, तो इससे सुंदर, सफल और सार्थक जीवन क्या हो सकता है। सफलता प्राप्त करने की अभीप्सा आप में है तो उसे पाने के उपायों पर विचार करें। सफलता की प्राप्ति में बहुत सी बातें योगभूत बनती हैं। सबसे पहली और आवश्यक चीज है–लक्ष्य का निर्धारण।

आप किस दिशा में आगे बढ़ना चाहते हैं और कहां पहुंचना चाहते हैं, यह स्पष्ट कर लेना ही है लक्ष्य का निर्धारण। लक्ष्य निश्चित किए बिना कोरा गतिशील होना विशेष अर्थ नहीं रखता। उठाया हुआ कोई भी कदम तभी सार्थक और सफलता में सहयोगी हो सकता है कि पहले आपका लक्ष्य सुस्पष्ट हो और उसी दिशा में आपके कदम उठ रहे हैं। निश्चित लक्ष्य के बिना सफलता की कामना एक दिवास्वप्न के समान होता है। विलियम जेम्स ने सटीक लिखा है कि ''जीवन का सबसे बड़ा उपयोग इसे किसी ऐसी चीज में लगाने में है जो इसके बाद में भी रहे।' एक दरख्त है जो सारी रात महज इसलिए बिना सोए मुस्तैद खड़ा रहा, ताकि शैतानी ताकतों को देख पाए। ये शैतानी ताकतें ऐसी थीं, जिनकी वजह से बच्चे डर जाते थे। उनके लिए मुस्कुराना मुश्किल हो गया था। ये अनूठा दरख्त अकेले ही खड़े रहकर सच्चाई की तलाश करता रहा। रात भर वह कुछ-कुछ चिड़चिड़ा बना रहा, पर जैसे ही उसने अपनी छाल और पत्तियों को छोड़ दिया, वसंत आ गया। हर तरफ फूल खिल गए। कुदरत गुनगुनाने लगी। देखते ही देखते, वो सब दरख्त, जो फुलवारी की रखवाली नहीं कर पाए थे, सुबह के वक्त उसकी खूबसूरत सोच के लिए उसे दुआएं देने लगे।

किसी महान एवं रचनात्मक उद्देश्य के लिए जब प्रेरणा जागृत होती है तभी कोई सिकन्दर बुद्ध बनने की ओर अग्रसर हो सकता है। व्यक्ति भीतर से स्फुरित हो जाता है तो वह प्रेरणा प्रण या लक्ष्य में बदल जाती है।

एक युवक एक गुरु के पास पहुंचा। युवक बड़ा बेचैन था, निरुत्साहित था। गुरु से बोला–''मैं कुछ करना चाहता हूं। जीवन में कुछ बनना चाहता हूं पर मुझे सफलता नहीं मिलती।'' गुरु ने उससे कहा–''यह बहुत अच्छी बात है कि तुम जीवन में कुछ करना चाहते हो। अच्छा, यह बताओ कि तुम क्या करना चाहते हो?''

युवक बोला–''यह तो मुझे पता नहीं, पर कुछ तो करना चाहता हूं जिससे मुझे धन मिले, ख्याति मिले।'' गुरु ने फिर पूछा–''अच्छा यह बताओ, तुम्हारी रुचियां क्या हैं? तुम्हारे विचार में तुम क्या बन सकते हो?'' युवक ने कहा–''मेरे पास ऐसा कोई विशेष ज्ञान या योग्यता नहीं है। अपनी खास रुचि के बारे में भी मैंने कभी सोचा नहीं। मुझे यह भी पता नहीं कि मैं क्या कर सकता हूं। मैं अब तक सदा इस उलझन में ही हूं कि मैं क्या करूं।'' गुरु ने कहा–''और इस पर तुम कहते हो कि तुम्हें सफलता नहीं मिलती। जब तुम्हें पता नहीं कि तुम्हें कहां जाना है तो तुम किस चीज की सफलता की अपेक्षा करते हो?' यह प्रसंग इस बात को स्पष्ट करता है कि लक्ष्य निर्धारण के बिना सफलता पाना नामुमकिन है।

जो व्यक्ति अपने जीवन का लक्ष्य निश्चित कर लेता है और उसके लिए सदा उत्साहित रहता है वह एक रचनात्मक, क्रियात्मक व निर्णयात्मक सृजन शक्ति बन जाता है। यह निश्चित है कि मनुष्य एक शक्ति संपन्न प्राणी है। हमारे भीतर अथाह शक्तियां छिपी पड़ी हैं। मन की शक्ति, विचार की शक्ति, संकल्प की शक्ति और विवेक की शक्ति। इनका हम जितना अधिक और जितना नियोजित, सुव्यवस्थित प्रयोग करेंगे, उतना ही इनका विकास होता जाएगा। हमारी दुर्बलता बस यही है कि वे महान् शक्तियां बिखरी हुई रह जाती हैं और इनका सम्यक् उपयोग हम नहीं कर पाते हैं। इसीलिए बड़ी उपलब्धियों से हम वंचित रह जाते हैं।

एक युवक फिल्मी अभिनेता बनने का दिन रात स्वप्न देखता है और एक डॉक्टर भी वह बनने की सोचता है। साथ ही साथ बड़ा व्यापारी बनने के लिए वह जूतों की दुकान भी खोलकर बैठ जाता है। वह कहीं भी सफल कैसे हो सकता है जब उसका लक्ष्य उसके अपने मस्तिष्क में ही स्पष्ट नहीं है। जीवन में सफल होने के लिए यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम अपने लक्ष्य को निर्धारित करें। जीवन का लक्ष्य आपकी सामर्थ्य, इच्छा शक्ति एवं योग्यता पर आधारित होना चाहिए। लक्ष्य के साथ प्रेरणा एवं प्रेरकता भी जरूरी है।

आप तथागत बुद्ध को और सिकन्दर को एक साथ खड़ा कर दो। बुद्ध अपने साधारण वस्त्रों में, सिकन्दर जो कि रत्नजड़ित साज-सज्जा में अकड़ा खड़ा है, से कहीं अधिक महिमामंडित लगते हैं। बुद्ध और सिकन्दर महान जैसे व्यक्तित्वों के प्रतीक आज के जगत में भी उपलब्ध हैं। आप और हम भी ऐसे ही प्रतीक हैं। किसी महान एवं रचनात्मक उद्देश्य के लिए जब प्रेरणा जागृत होती है तभी कोई सिकन्दर बुद्ध बनने की ओर अग्रसर हो सकता है। व्यक्ति भीतर से स्फुरित हो जाता है तो वह प्रेरणा प्रण या लक्ष्य में बदल जाती है। वही प्रेरणा और प्रण अस्थिर, निराश और निकम्मे व्यक्ति को दैवी शक्तियों से संपन्न बना देती है। आप अनुभव कर ये देख सकते हैं कि जिस किसी व्यक्ति में लक्ष्य के प्रति गहन अभिप्रेरणा जाग गई और लक्ष्य के प्रति जो कृत संकल्प हो गया, उसके व्यक्तित्व में एक नई ही आभा, एक नई चमक आ जाती है। वह फिर प्रत्येक वस्तु में एक दिव्यता के दर्शन करता है। संदेह, भय, कुंठा आदि जो कल तक उसके पग रोक रही थी, वे सब हवा में कहीं गायब हो जाती हैं। किसी लक्ष्य प्राप्ति हेतु आप कार्य में जुटते हैं, तो आप पाएंगे कि जीवन की अनियमित दिनचर्या में एक नियम-क्रम आ गया है। जीवन में सहज अनुशासन आ रहा है। विचार व कार्य में सहज समन्वय अभिव्यक्त होता जा रहा है।

साहित्य मनीषी आचार्य श्रीमद् विजय वीरेंद्र सूरीश्वरजी म. सा. एवं सुखी परिवार अभियान के प्रणेता गणि श्री राजेंद्र विजयजी म.सा. के श्री ठाकुरद्वार चातुर्मास पर हार्दिक शुभकामनाएं एवं मंगलभावनाएं

राजमल जैन, अध्यक्ष महेन्द्र जैन करवावाल, महामंत्री

श्री ठाकुरद्वार जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ

नैमानीवाड़ी, सी.पी. टैंक, ठाकुरद्वार
मुंबई 400002
फोन– 022–22067630
मो. 9323195363, 9004721116, 9619018965

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2010-2012
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
September 2011

Tirupati travel

Mitesh : 9320551264

Online Air Reservation

www.tirupatitravel.in
www.shreetirupatitravels.com

Corporate Office
1/A, Vijya Residency, Lalbaug, Mumbai-12
Phone: 24712299/ 24702399/ 24712499
Email: mangilaljain27@yahoo.com

FRANCHISEE AVAILABLE

If undelivered please return to:
Editor, Samradha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092